दीवान-ए-मयंक

(हिन्दी वर्णमाला पर आधारित)

✍ के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी

संकलन

'सरवत' जमाल

'शेरी' अकादमी, भोपाल

"DEEWAN-E-MAYANK"

By : Dr. K.K. Singh 'Mayank' Akbarabadi

© डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी एवं श्रीमती सरोज सिंह

नाम किताब	:	'दीवान-ए-मयंक'
शायर	:	**डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी**
परामर्श	:	श्रीमती सरोज सिंह
संकलन	:	'सरवत' जमाल
संपादक	:	मक़बूल 'वाजिद'
पृष्ठ संख्या	:	232 पृष्ठ
मूल्य	:	बिना जिल्द रू. 150/-, सजिल्द रू. 200/-
संस्करण	:	प्रथम 2014 ई.
कम्पोजिंग/अवारण	:	धनराज पवार, भोपाल
प्रकाशक	:	**'शेरी' अकादमी, भोपाल**
मुद्रक	:	शाईन ऑफसेट प्रिन्टर्स, भोपाल

मिलने का पता

'शेरी' अकादमी, भोपाल

4-आम वाली मस्जिद रोड, जहांगीराबाद, भोपाल-462008

मो. 09425377323, ई-मेल : maqboolwajid@gmail.com

डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी

'ग़ज़ल'-5/597, विकास खण्ड, गोमतीनगर, लखनऊ-226010, मो. 09415418569

'सरवत' जमाल

पीली कोठी, राजा मैदान, पुरानी बस्ती, ज़िला बस्ती-272002 (उ.प्र.)

मो. 07505660714, ई-मेल : sarawatjamal9@gmail.com

समर्पण

अपनी अर्धांगिणी श्रीमती सरोज सिंह को सादर समर्पित, जिनकी रफ़ाक़तें, मोहब्बतें एवं अपेक्षाएँ हमेशा मेरे साथ हैं और उन्होंने उस कहावत को भी सच साबित कर दिखाया कि **''आदमी की तरक़्क़ी में किसी न किसी औरत का हाथ ज़रूर होता है।''** बल्कि मैं तो इससे भी दो क़दम आगे की बात करूंगा कि यदि उनकी पुश्त पनाही मुझे हासिल नहीं होती तो हिन्दी वर्णमाला पर आधारित मेरा यह 'दीवान-ए-मयंक' मुरत्तब होकर मंज़रे-आम पर नहीं आ सकता था। उनकी मेहनतों, कोशिशों, काविशों एवं प्रेरणा का ही यह प्रतिफल है कि आज 'दीवान-ए-मयंक' आपके हाथों की ज़ीनत बन रहा है। उनका शुक्रिया अदा करने के लिए मेरे पास अल्फ़ाज़ नहीं हैं।

डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी

हदीसे-हुस्न और हिकायते-रोज़गार का शायर

प्रो. मलिक ज़ादा 'मंज़ूर' अहमद

इस बात में इख़्तलाफ़े-राय की गुंजाइश नहीं है कि उर्दू-हिन्दी हमारी एक मुश्तरका विरासत है जिसमें मुस्लिम शायरों और अदीबों के साथ दीगर मज़ाहिब के लोगों के भी इतने गरां क़द्र अदबी कारनामे रहे हैं कि अगर इनको नज़र अन्दाज़ कर दिया गया तो अदब में ऐसा ख़ला पैदा होगा जिसे पुर करना मुश्किल होगा। उन लोगों में, जिन्होंने दौरे-हाज़िर में शेरो-अदब के हवाले से उर्दू-हिन्दी की ख़िदमत की है, जनाब के.के. सिंह 'मयंक' का नाम भी शामिल है। 'मयंक' साहब हिन्दुस्तानी रेलवे में एक बहुत ही मुअज़्ज़िज़ ओहदे पर फ़ाइज़ थे और अदब से दिलचस्पी का यह आलम रहा कि जहां-जहां भी इनका तबादला होता गया, वह शेरो-अदब के हवाले से शेरो-शायरी का मरकज़ी मक़ाम बनता चला गया। उन शहरों का ज़िक्र तो तफ़सील के साथ ही किया जा सकता है।

शायरी से 'मयंक' साहब की दिलचस्पी इतनी ज़ियादा रही है कि जिस रेल्वे सैलून में दौराने-मुलाज़मत आप सफ़र करते थे, वह भी हिन्दुस्तानी रेलवे की तारीख़ में, अदबी मरकज़ बन गया और वह सैलून जिन-जिन स्टेशनों पर रुका, उस शहर का अदबी मरकज़ बना और वहां के शोअरा 'मयंक' साहब को दादे-सुख़न देते रहे और अपनी शायरी पर दाद भी लेते रहे।

'मयंक' साहब की शायरी में वो तमाम आला अख़लाक़ी क़द्रें पाई जाती हैं, जिनकी तर्जुमानी हर दौर में, शेरो अदब का शेवा रही है। क़ौमी यकजहती, जज़बाती हम आहंगी, आला अख़लाक़ी क़द्रें, वतन की मुहब्बत और हुस्नो-इश्क़ की वारदात उनकी शायरी के महबूब मौज़ूआत रहे हैं। यहां पर मैं यह भी लिखना चाहता हूँ कि सिर्फ़ शायरी में ही ये मौज़ूआत उनके यहां उभर कर नहीं आए बल्कि ख़ुद उनकी ज़िन्दगी भी आला इन्सानी क़द्रों की तर्जुमान रही है। हुस्नो-इश्क़, नाज़ो-नियाज़, हिज्रो-विसाल के अलावा हमारे चारों तरफ़ जो ज़िन्दगी की नाहमवारियां बिखरी हुई हैं, जिन्हें 'मयंक' साहब ने बहुत ख़ूबसूरत अन्दाज़ में, अपनी शायरी में पेश किया है और सबसे ज़ियादा ख़ास बात तो यह है कि उनके यहां बहुत ही आसान, सुबुक और शीरीं अलफ़ाज़ का इस्तेमाल हुआ जिसे आसानी के साथ सब लोग समझ सकते हैं।

'मयंक' साहब की एक और बड़ी ख़ूबी यह भी है कि जब वह तहत या तरन्नुम में अपना कलाम पेश करते हैं तो उनके लहजे का उतार-चढ़ाव ऐसा होता है कि उसे हर ख़ासो-आम आसानी से समझ सकता है। वह जो भी कहते हैं, उसकी कैफ़ियत में डूब कर अपना कलाम सुनाते हैं और यही वह चीज़ है जो मुशायरों में उन्हें दूसरे शायरों से अलग करती है। कलाम के साथ-साथ अगर अन्दाज़े-पेशकश अच्छा हो तो मुशायरों में शायर कामयाब होता है। यही कामयाबी 'मयंक' साहब को सिर्फ़ हिन्दुस्तान में ही नहीं

बल्कि अमरीका, दुबई और कनाडा के मुख़्तलिफ़ शहरों तक भी ले गई है और वहां भी उन्होंने अपनी कामयाबी के झण्डे गाड़े हैं।

'मयंक' साहब के अब तक 23 शेरी मज्मूए शाया हो कर मन्ज़रे-आम पर आ चुके हैं। बहुत से रिसालों ने उनके ख़ुसूसी नम्बर भी शाया किए हैं। ज़ेरे-नज़र उनकी 24वीं शायरी की किताब, दीवान की शक्ल में, देवनागरी में शाया हो कर, मन्ज़रे-आम पर आ रही है। इस किताब में यह एहतमाम किया गया है कि हिन्दी वर्णमाला के हर अक्षर के हवाले से रदीफ़ें रखी जाएं। यह काम वही शायर कर सकता है जो भाषा पर पूरा नियंत्रण रखता हो और हिन्दी-उर्दू शायरी के मिज़ाज से भी बख़ूबी वाक़िफ़ हो। जहां तक मेरे इल्म और वाक़फ़ीयत की बात है तो अब तक हिन्दी अक्षरों के एतबार से किसी भी दीवान की मुझे कोई ख़बर नहीं है।

मुझे पूरी उम्मीद है कि हिन्दी और उर्दू के अदबी हलक़ों में इस किताब की ख़ातिर ख़्वाह पज़ीराई होगी और 'मयंक' साहब के कलाम से तमाम लोग फ़ायदा भी उठाएंगे।

मेरी तमाम नेक ख़्वाहिशात 'मयंक' साहब के साथ इसलिए भी हैं कि वह अपनी शायरी में अच्छे ख़यालात के साथ ही साथ क़ौमी यकजहती, जज़बाती हम आहंगी और हिन्दुस्तानी मिज़ाज की तर्जुमानी भी करते हैं। मुझे यक़ीन है कि अवामो-ख़वास दोनों में ही 'दीवान-ए-मयंक' यक्साँ तौर पर मक़बूल होगा।

लखनऊ — **कंचन बिहारी मार्ग, कल्याणपुर,**
दिनांक : 22 मार्च 2014 — **लखनऊ (उ.प्र.) मो. 09335922404**

उर्दू और हिन्दी शायरी के बीच एक विश्वस्त पुल

'ज़हीर' क़ुरेशी

यूँ वरिष्ठ ग़ज़लगो डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी से कभी भी मेरी साक्षात् मुलाक़ात नहीं हुई। मगर उनके शेरों को यदा-कदा पढ़ने का अवसर ज़रूर मिलता रहा। उससे भी अधिक, मैं सदैव इस तथ्य से सुपरिचित रहा कि 'मयंक' रेल महकमे के एक आला अफ़सर रहे हैं। लेकिन, इतना हम सभी जानते हैं कि किसी भी कवि या शायर को उसका उच्च पदाधिकारी होना कविता की दुनिया में उसे कोई बुनियादी लाभ नहीं पहुँचाता।

मोबाइल करके जब मुझे जनाब मक़बूल 'वाजिद' साहब ने 'दीवान-ए-मयंक' पर कुछ हिन्दी कविता एवं हिन्दी ग़ज़ल के नज़रिए से लिखने का अनुरोध किया तो उस समय तक भी मैं के.के. सिंह 'मयंक' के प्रति तटस्थ ही था। लेकिन जब 'दीवान-ए-मयंक' का मसव्विदा मेरी नज़रों से गुज़रा तो उन ग़ज़लों को पढ़ने के बाद, मेरी नज़र में उनकी छवि को जैसे चार चाँद लग गए।

उसका पहला कारण तो यह है कि अभी तक मुझे जितने भी शायरों के दीवान देखने को मिले, उनके रदीफ़ (शेर का अंतिम अक्षर) 'अलिफ़' से 'ईए' तक की ही यात्रा करता हुआ मिला। लेकिन, 'दीवान-ए-मयंक' की लगभग 210 ग़ज़लों के हर शेर के अंतिम अक्षर ने लीक से हटते हुए हिन्दी वर्णमाला के 'अ' से 'क्ष', 'त्र', 'ज्ञ' तक का कामयाब सफ़र पूरा किया। कम अज़ कम यह मेरे जैसे हिन्दी प्रकृति के शायर को पहली ही नज़र में आकर्षित करने के लिए काफ़ी था। 'अ', 'आ', 'ण', 'ढ़', 'क्ष', 'त्र', 'ज्ञ', जैसे अक्षरों से ग़ज़ल के रदीफ़ का अंत सायास होते हुए भी चमत्कृत करने वाला था। फिर 'मयंक' जी ने 'ख' के साथ 'ख़', 'क' के साथ 'क़', 'ज' के साथ 'ज़', 'ग' के साथ 'ग़' जैसे अक्षरान्त की रदीफ़ों में कामयाब शेर कह कर अपनी शायराना पुख़्तगी और अतिरिक्त सूझ-बूझ का भी परिचय दिया। मेरे समक्ष हिन्दी (वर्ण माला के) नज़रिए से अपने दीवान को संयोजित करने का विचार ही क्राँतिकारी है। सबसे पहले तो मैं उनके इस अभिनव नज़रिए को सलाम करता हूँ।

जहाँ तक 'मयंक' जी की शायरी का सवाल है तो के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी मूलतः उर्दू के शायर हैं। उनके शेरों में उर्दू शायरी के रंगे-तग़ज़्ज़ुल (एक आवश्यक रूमानीपन) और कैफ़ियत (भावमयता) के जगह-जगह दर्शन होते हैं।

कथ्य के स्तर पर, विषयों का वैविध्य भी उनके यहाँ पर्याप्त है। अपने शेरों में कई बार वे ऐसे निष्कर्षों तक भी पहुँच जाते हैं, जो विरल हैं। उनका एक शेर है :-

क़फ़स की ज़िन्दगी गर रास आ जाए परिन्दे को,
रिहाई उसको लगती है सज़ा, ऐसा भी होता है।

इक्कीसवीं सदी का आदमी खिलखिलाना तो छोड़िए, मुस्कुराना भी भूल बैठा है।

बेचारे गुँचे सिर्फ़ इसलिए मुस्कुराते हैं, क्योंकि मुस्कुराना उनके लिए 'ड्यूटी बाउण्ड' है। 'मयंक' का एक यादगार शेर देखिये :-

किसके लब पर गुलसिताँ में है तबस्सुम की लकीर,
सिर्फ़ गुँचों के सिवा अब मुस्कुराता कौन है?

बिस्तर के बयान के अनुसार, भिन्न-भिन्न सोने वालों का अनिद्रा-संताप.... के.के. सिंह 'मयंक' का एक और क़ीमती शेर :-

कटी है रात किस आलम में किसकी,
सहर के वक़्त बिस्तर बोलते हैं।

उपरोक्त उर्दू प्रकृति के शेरों के अलावा, 'मयंक' जी के कुछ हिन्दी रंग में रँगे शेरों की छटा भी देखते ही बनती है। राजनीति में सत्ता का समर्थन करने वाले चाटुकार मुखर नहीं होते, मुखर होता है विपक्ष-जो कई बार तो विरोध के लिए ही विरोध करता है। विपक्ष के विरोध की महामारी को 'मयंक' अपने एक शेर में कुछ यूँ बयान करते हैं :-

अब समर्थन कोई करता ही नहीं,
बन गया है अब महामारी विरोध।

एक आवश्यक रूमानीपन और भावमयता से सराबोर उनका यह हिन्दी प्रकृति का शेर भी दृष्टव्य है :-

न आओ, द्वार ही से लौट जाओ,
तुम्हारे पाँव की इक चाप ही शुभ।

क़ानून अंधा होता है। यह निष्कर्ष तो सर्व विदित है। लेकिन, क़ानून की वजह से न्याय किस प्रकार दृष्टिहीन हो जाता है, 'मयंक' साहब का एक बामक़सद शेर देखिए :-

आँख होती ही नहीं क़ानून की,
इसलिए कहते हैं सब अंधा न्याय।

के.के. सिंह 'मयंक' की शायरी की वुसअत पर और भी बहुत सी बात की जा सकती है। लेकिन, अभी, बस, इतना भर ही।'दीवान-ए-मयंक' के समुद्र में आप भी ग़ोते लगाइए और अपने स्तर पर तरह-तरह के मोती भी चुन कर लाईए।

भोपाल
दिनांक : 22 मार्च 2014

108, त्रिलोचन टावर, संगम सिनेमा के सामने,
गुरुबक्श की तलैया, भोपाल-462001 (म.प्र.)
मो. 09425790565

शायरी का नायाब हीरा-'मयंक' अकबराबादी

अशोक 'अंजुम'

बात लगभग दो दशक पुरानी है, 1992 के आसपास...उस समय मैं आठ ग़ज़लकारों के साथ एक ग़ज़ल-संग्रह 'अंजुरी भर ग़ज़लें' के संपादन में मशग़ूल था और तब उसी दौरान मेरा संपर्क हुआ जनाब के.के. सिंह 'मयंक' जी से।'मयंक' जी के तब तक सात शेरी मज्मूए शाया हो चुके थे और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में मैं आपकी ग़ज़लें पढ़ता, सराहता भी रहता था। मैंने अपनी किताब में ग़ज़लें देने के लिए 'मयंक' जी से कहा और वे ख़ुशी-ख़ुशी तैयार हो गए। उस समय आप सेन्ट्रल रेलवे बम्बई के रेलवे क्लेम्स ट्रिब्यूनल में प्रज़ेटिंग अफ़सर थे। 'मयंक' जी की ग़ज़लों ने 'अंजुरी भर ग़ज़लें' के क़द को बेहतर ऊँचाई दी और फिर इसी बीच जब आप आगरा में रेलवे मण्डल प्रबन्धक के पद पर तैनात हुए तो कुछेक मर्तबा आगरा केंट से कवि सम्मेलनीय यात्रा के लिए गाड़ी पकड़ने के बीच आपसे मुलाक़ातें भी हुईं। जितने बड़े अधिकारी, उससे भी बड़े, बहुत बड़े शायर... और इस तरह सिलसिला चलता रहा।

मैं 'मयंक' जी की शायरी का हमेशा से ही मुरीद रहा हूँ। अपनी ग़ज़लों में आपने अछूते प्रयोग किए हैं। एकदम नये-टोटके का प्रयोग... अक्सर लगा कि मैं ऐसा क्यों न कह पाया। एक संवाद-शैली में कही गयी आपकी ग़ज़ल तो अर्से तक मेरे दिलो-दिमाग़ पर छाई रही। देखें ज़रा :-

मैंने कहा-'हो जलवागर', उसने कहा-'नहीं, नहीं'
मैंने कहा-'मिला नज़र', उसने कहा-'नहीं,नहीं'

और इसी ग़ज़ल का मक़्ता :-

मैंने कहा कि, 'हो नज़र', उसने कहा-'कहाँ, किधर?'
मैंने कहा-'मयंक पर', उसने कहा-'नहीं, नहीं'

'अंजुरी भर ग़ज़लें' में मैंने इस ग़ज़ल को बड़े चाव से रखा और किताब की समीक्षाओं, चर्चाओं में अधिकांश विद्वानों ने इस ग़ज़ल को कोट भी किया।

बहरहाल, वक़्त बीतता गया और इस बीच 'मयंक' जी से संवाद लगभग टूट ही गया और फिर 15 जनवरी 2006 को लखनऊ जाना हुआ, कवि एवं वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक मित्र अखिलेश निगम 'अखिल' से भेंट हुई तो उन्होंने बताया कि 'मयंक' जी के यहाँ आज काव्य-गोष्ठी है और फिर जब उन्होंने फोन से 'मयंक' जी को मेरे लखनऊ आगमन की सूचना दी तो वे बहुत ख़ुश हुए और मुझे ज़रूर ही उस गोष्ठी में शामिल होने का न्यौता दिया। मैं गया तो वहाँ लखनऊ के तमाम परिचित कवियों, शायरों के बीच 'मयंक' जी द्वारा विशेष मान-सम्मान मिला। अपनी नयी किताब 'कायनात' भी उन्होंने भेंट की... सुनना-सुनाना हुआ...बहुत अच्छा लगा।

सो, कहना यह है कि 'मयंक' जी से और उनकी शायरी से मेरा वास्ता कोई नया नहीं है मेरे लिए... अब जब भाई जनाब 'सरवत' जमाल जी ने कहा कि मुझे 'मयंक' जी ने अपनी

नई किताब 'दीवान-ए-मयंक' तरतीब देने के लिए कुछ कहा है और उनका विशेष आग्रह है कि मैं उस पर ज़रूर कुछ लिखूँ, तो मुझे बेहद ख़ुशी हुई और मन में संकोच भी कि इतने बड़े शायर हैं 'मयंक' जी, तब उन पर लिखना... क्या बेहतर तरीक़े से मैं अपनी बात कह पाऊँगा...। अब तक आपकी शायरी की तेईस किताबें आ चुकी हैं... सीरियल्स, फिल्म, कैसेट्स, रिकार्ड्स, कवि सम्मेलन, मुशायरे... कहाँ नहीं है आपकी शायरी का जलवा। जिनके बारे में स्वर्गीय 'कैफ़ी' आज़मी लिखते हैं, ''मयंक साहब का इतना शौक़, इतना ज़ौक, इतनी लगन और उर्दू शायरी से इस दर्जा मोहब्बत क़ाबिले-सताइश भी है और क़ाबिले-तारीफ़ भी। डॉ. 'राहत' इन्दौरी आपके पूर्व प्रकाशित दीवान के बारे में कहते हैं, 'दीवान-ए-मयंक' से 'मयंक' साहब की आलिमाना सलाहियतों का तफ़सीली तआरूफ़ होता है। जनाब 'वसीम' बरेलवी साहब ने अपनी बलंद आवाज़ में कहा है, ''मयंक' साहब मनमोहकता के पैकर, ख़ुलूस के सागर और दिल के क़लंदर हैं।'' और बशीर बद्र साहब की ये टिप्पणी, ''मयंक अपनी मेयारी कला और अपने अंदाज़े-फ़िक्र की बदौलत हिन्दुस्तान के गोशे-गोशे में जाना जाने वाला नाम है।'' कहना ये कि इस वक़्त का कौन-सा ऐसा शायर होगा जिसने 'मयंक' जी की मयारी शायरी के क़द को न सराहा हो। आपके पास जो अन्दाज़ है, जो फ़नकारी है वह और कहीं कम देखने में आती है। गंगा-जमुनी कल्चर के हिमायती 'मयंक' साहब ग़ज़ल की दुनिया में ऊँचा, बहुत ऊँचा मक़ाम रखते हैं।

'मयंक' जी यूँ बात कहते हैं कि ज़िन्दगी, समाज, दुनिया वग़ैरह सब एक शेर में इस ख़ूबसूरती से समा जाते हैं कि दिल बाग़-बाग़ हो जाता है, धड़कनें बढ़ जाती हैं और कम-अज़-कम कुछ देर थमे रहने का मन करता है। ज़हन में अशआर बहुत गहराई तक घुल जाते हैं। ज़िन्दगी के हर रंग के गहरे पारखी हैं 'मयंक' जी, और ये परख यूँ ही नहीं आ जाती। तपती रेत पर नंगे पाँव मुस्कराते हुए चलकर ये शर्फ़ हासिल होता है। इसी के साथ ऊपर वाले पर भरोसा भी ज़रूरी है, 'मयंक' जी कहते हैं :-

जो कश्ती तेरी रहमत के सहारे छोड़ देता है
उसे तूफ़ान ख़ुद लाकर किनारे छोड़ देता है

मगर वे ये भी जानते हैं कि कश्ती जिस भगवान के सहारे छोड़ना चाह रहे हैं, वो उन्हें कम-अज़-कम इबादतगाहों में तो नहीं ही मिलेगा, क्योंकि :-

इबादतगाहों से उठती तो है लोबान की ख़ुश्बू
मगर अफ़सोस मिलती ही नहीं भगवान की ख़ुश्बू

एक ख़ास बात ये भी कि 'मयंक' जी की शायरी में वतन परस्ती का जज़्बा विशेष रूप से दिखाई देता है और आप वतन के बिगड़े हालात से बेहद दुखी भी हैं। उनकी इच्छा है कि सूरते-वतन बदले। मगर हालात ऐसे हैं कि हर कोशिश करने वाला, अगर उसे 'मयंक' जी जैसा सलीक़ा आता है, तो वो यही कहेगा:-

समुन्दर, भीड़, रौनक़, रौशनी, बाज़ार, आराइश
थके-हारे हुए सूरज को ढलने कौन देता है

'मयंक' अपने वतन, प्यारे वतन का बदनुमा चेहरा
बदलना चाहता तो हूँ बदलने कौन देता है

जी हाँ, सूरते-वतन ऐसी है कि क्या कहा जाए। यहाँ मुझे भी अपना एक दोहा याद आ रहा है:-

साफ़ नज़र आता नहीं, किस रस्ते पर हिन्द
लोकतंत्र की आँख में, हुआ मोतियाबिन्द

इस सूरते-वतन को बदहाल करने वालों पर नज़र सबकी है। सब जानते हैं कि ये किसका काम है। आज के आधुनिक रहनुमाओं पर तंज़ करते हुए 'मयंक' जी कहते हैं:-

वे वतन पर मिट गए, और ये मिटा देंगे वतन
जानते हो किस तरफ़ मेरा इशारा है मियाँ

जी हाँ, 'मयंक' जी सब जानते हैं। पर अफ़सोस ये कि हम ख़ुद इनके हाथों में वतन की बाग़डोर सौंपते चले आ रहे हैं। ...दिल्ली की राजनीति में पिछले दिनों एक बदलाव दिखाई दिया था, कुछ रौशनी नज़र आई थी लेकिन लगता है स्थितियाँ फिर वहीं ही जा पहुंची हैं। 'मयंक' जी की शायरी में जहाँ उर्दू की मिठास है, वहीं हिन्दी का लुभावना रंग भी दिखाई देता है :-

ईसा, नानक, गौतम, गाँधी रोज़ नहीं मिलते
सदियाँ गुज़रें तब मिलती है इच्छाधारी ज्योति

बढ़ती महँगाई में मुफ़ुलिसी के मारों की हालत ख़स्ता है, आम आदमी त्राहि-त्राहि कर उठा है और ऐसे में त्यौहार आ जाएँ तो कोढ़ में खाज-सा हाल:-

महीना तीस दिन त्यौहार सौ-सौ
अकेली जान पर हथियार सौ-सौ

और एक चित्र ये भी:-

जब ग़रीबी से लड़ गयी ममता
उसकी पायल सुनार तक पहुँची

कुल मिलाकर जनाब के.के. सिंह 'मयंक' जी का हिन्दी वर्णमाला पर आधारित यह 'दीवान-ए-मयंक' शायरी की इस दौर में छपने वाली तमाम किताबों के बीच में एक नायाब हीरा है, जिसकी चमक रहती दुनिया तक क़ायमो-दायम रहेगी। यही कामना है। आमीन!

अलीगढ़
दिनांक : 15 मार्च 2014

संपादक : 'अभिनव प्रयास'
स्ट्रीट-2, चन्द्रविहार कॉलोनी, (नगला डालचन्द)
क्वार्सी बाईपास, अलीगढ़-202001

वर्तमान का आइना - डॉ. के.के. सिंह 'मयंक'

डॉ. कृष्ण कुमार 'नाज़'

कहा जाता है कि साहित्य, समाज का दर्पण होता है। अगर यह सच है, तो यह भी सच है कि दर्पण ज़िन्दगी की ज़रूरत भी है। इसलिए साहित्य, ज़िन्दगी की ख़ास आवश्यकता हुआ। हो भी क्यों न? आख़िर साहित्यकार भी इसी समाज का एक अंग है और वो अपने लेखन उपकरण इसी समाज से प्राप्त करता है। यही कारण है कि प्रत्येक साहित्यकार की रचनाधर्मिता में कभी अतीत होता है, तो कभी वर्तमान और कभी भविष्य। वर्तमान चूँकि अतीत के कंधों पर बैठा है और भविष्य वर्तमान की उँगली थामे हुए है। यह एक श्रृंखला है, जो सदियों से चलती आ रही है और चलती रहेगी। साहित्यकार न अतीत से ग़ाफ़िल रहता है, न वर्तमान से और न भविष्य से। यही वजह है कि उसकी रचनाओं में तीनों कालों का समावेश होता है। वर्तमान को वर्तमान में ही जीने की कला साहित्यकार बख़ूबी जानता है। जिसे यह कला नहीं आती, वो कुछ भी हो सकता है, मगर साहित्यकार हर्गिज़ नहीं।

आदरणीय के.के. सिंह 'मयंक' जी भी ऐसे ही साहित्यकार हैं, जिनके अशआर में हर क़दम पर ज़िन्दगी की पदचाप सुनाई देती है। रेलवे में उच्च पदों पर आसीन रहे 'मयंक' जी का साहित्य में भी उच्च स्थान है। उनके अशआर जहाँ वर्तमान का आईना हैं, वहीं भविष्य की धरोहर भी। रेलगाड़ियों का धुआँ उगलने से लेकर धुआँ निकलने तक का सफ़र उन्होंने देखा है। शायद यही हमारे समाज की स्थिति भी है। जहाँ कभी कच्ची छतें होती थीं, वहाँ लेंटर हो गए हैं, जहाँ कभी ज़मीन पर गोबरी की लिपाई होती थी, वहाँ सीमेंट का फ़र्श हो गया है, जहाँ कभी आगंतुक दरवाज़े की कुंडी खटखटाता था, वहाँ कालबेल लगा दी गई है, जहाँ कभी मिट्टी की ढिबरियाँ जलती थीं, वहाँ बिजली के बल्ब अपनी चमक-दमक फैला रहे हैं, जहाँ कभी छोटे बड़ों के पैर छूते थे, वो अब हाय-हैलो कहकर उनसे हाथ मिला रहे हैं। कितनी तरक़्क़ी की है हमने, जूती ने पगड़ी के अधिकार छीनकर उसे अपनी जगह ला दिया और ख़ुद उसकी जगह पहुँच गई। सच्चाई को साबित करने के लिए प्रमाणों की आवश्यकता हो रही है। ऐसी बहुत-सी बातें हैं, जो किसी संवेदनशील रचनाकार को लिखने के लिए विवश करती हैं। 'मयंक' जी भी इससे अछूते नहीं हैं। इसीलिए उन्होंने ये शेर कहे हैं :-

जीत कर दुनिया जो ख़ाली हाथ दुनिया से गया
उस सिंकदर की हमें क़िस्मत मिली तो क्या मिली

इबादतगाहों से उठती तो है लोबान की ख़ुशबू
मगर अफ़सोस, मिलती ही नहीं भगवान की ख़ुशबू

एक ही आदमी पर पूरे परिवार का बोझ? आख़िर वो करे भी तो क्या? ज़िन्दगी है कि कुछ भी सोचने का मौक़ा नहीं देती। 'मयंक' साहब की पारखी नज़र ने ये नज़ारा भी बड़ी बारीकी से देखा है :-

खिलौने तब कहाँ थे खेलने को
खिलौने हैं, तो अब बचपन नहीं है

समंदर, भीड़, रौनक़, रोशनी, बाज़ार, आराइश
थके-हारे हुए सूरज को ढलने कौन देता है
'मयंक' अपने वतन, प्यारे वतन का बदनुमा चेहरा
बदलना चाहता तो हूँ, बदलने कौन देता है

महीना तीस दिन, त्योहार सौ-सौ
अकेली जान पर हथियार सौ-सौ

जब ग़रीबी से लड़ गई ममता
उसकी पायल सुनार तक पहुँची

अब कमरे और इक दालान
अब कैसा आँगन का बोझ
चीज़ें बेहद भारी हैं
हल्का-सा वेतन का बोझ

मैं तो पीतल नगरी मुरादाबाद का रहने वाला हूँ। मुझे मालूम है कि बेपेंदी के लोटे क़िस्तों में अपना किरदार निभाते हैं। अभी किसी की तरफ़ हैं, तो अगले ही क्षण लुढ़क कर दूसरे पाले में पहुँच जाते हैं। यक़ीन जानिये, लोटा तो प्रतीक है निरंतर गर्त में जाती हुई हमारी राजनीति और राजनेताओं का। मुझे लगता है आज यदि किसी पर सशक्त और धारदार व्यंग्य किया जा सकता है, तो वो है हमारी राजनीति और हमारे 'प्रतिभावान राजनेता' जो स्वार्थ की ख़ातिर निकटतम संबंधों पर भी नोट और वोट की तलवार चला देते हैं। 'मयंक' जी की पैनी दृष्टि ने उन्हें भी अपने कटघरे में खड़ा कर लिया है, यह शेर कह कर :-

राजनेताओं ने पछाड़ दिया
आज गिरगिट हैं नाम के गिरगिट
शाम से सुब्ह तक सब इंसाँ हैं
और फिर ठीक दस बजे गिरगिट

वाह-वाह 'मयंक' जी, आपने वर्तमान का बहुत अच्छा चित्रण अपने अशआर में किया है। आप बधाई के पात्र थे, हैं और रहेंगे। लगभग दो दर्जन पुस्तकों के रचनाकार आदरणीय 'मयंक' जी को इस नवीन कृति 'दीवान-ए-मयंक' के लिए मेरी बहुत-बहुत हार्दिक शुभकामनाएँ। माँ सरस्वती से कामना है कि 'मयंक' जी की यह अनमोल कृति भी समाज का मार्गदर्शन कर व्यवस्थाओं को अमली जामा पहनाए और उनकी साहित्यिक ऊँचाइयों को इतना ऊँचा कर दे, जिसे निहारने में लोगों की टोपियाँ गिर पड़ें।

मुरादाबाद
दिनांक : 10 मार्च 2014

सी-130, हिमगिरि कॉलोनी, काँठ
रोड, मुरादाबाद-244001
मो. 98083-15744, 99273-76877

डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' और उनका 'दीवान-ए-मयंक'

मक़बूल 'वाजिद'

हिन्दी औद उर्दू दोनों ही ज़बानें सगी बहनें हैं और संस्कृत इनकी माँ है एवं हिन्दोस्तान इनका असल मस्कन (जाए-पैदाइश) है। इसलिए हम इन दोनों ज़बानों को हिन्दोस्तानी ज़बान भी कह सकते हैं। कोई भी ज़बान किसी मख़सूस मज़हब या क़ौम की मीरास नहीं हो सकती, सभी का उस पर बराबर का हक़ होता है। जिस तरह हिन्दी साहित्य के विकास में कबीर, रहीम, जायसी और रसख़ान जैसे मुस्लिम कवियों का अभूतपूर्व योगदान रहा है ठीक उसी तरह उर्दू अदब की तरक़्क़ी-वो-तरवीज में भी इब्तिदा से ही ग़ैर-मुस्लिम शोअरा व उदबा ने हर दौर में अपनी बेशबहा ख़िदमात अंजाम दे कर उसे सजाया-संवारा है, जिसे उर्दू शेरो-अदब की तारीख़ कभी फ़रामोश नहीं कर सकती। पंडित दयाशंकर 'नसीम', बृजनरायण 'चकबस्त', मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता', रतननाथ 'सरशार', तिलोक चंद 'महरूम', गोपीनाथ 'अमन' राजेन्द्र सिंह बेदी 'सहर', आंनदनारायण 'मुल्ला', दत्तात्रय 'कैफ़ी', 'जोश' मलसियानी, 'अर्श' मलसियानी, कन्हैया लाल कपूर, मुंशी प्रेमचंद, रघुपति सहाय 'फ़िराक़' गोरखपुरी, 'फ़िक्र' तौंसवी, मालिक राम, ज्ञान चन्द जैन, रामलाल, जगन्नाथ 'आज़ाद', कृष्ण बिहारी 'नूर', गोपीचंद नारंग, चन्द्रभान 'ख़याल', शीन.काफ़ 'निज़ाम', 'गुलज़ार' देहलवी और 'सागर' त्रिपाठी से लेकर जनाब के.के.सिंह 'मयंक' अकबराबादी तक उर्दू उदबा व शोअरा की एक लम्बी फ़िहरिस्त है जिसने अपने ख़ूने-जिगर से इस चमन की आबयारी की है।

वैसे 'मयंक' पैदा तो हुए व्रज-भूमि मथुरा में जिसे भगवान कृष्ण की जन्म-भूमि कहलाने का भी फ़ख़्र हासिल है। मगर इनकी तालीमो-तरबियत मोहब्बतों के प्रतीक ताजमहल के शहर आगरा में हुई और यहीं पर उन्होंने पहली बार 'नज़ीर' अकबराबादी को पढ़ा और उनकी शायरी 'मयंक' के दिल को छू गई और फिर 'नज़ीर' अकबराबादी से ही अपने-आप उनका रूहानी रिश्ता भी जुड़ गया फिर तो उन्होंने अपने नाम के साथ अकबराबादी लफ़्ज़ का इज़ाफ़ा भी कर लिया और आगे चल कर 'मयंक' अकबराबादी के नाम से ही उर्दू शेरो-अदब में अपनी पहचान भी बनाई। 'मयंक' का रूजहान कविता व शायरी की तरफ़ बचपन से ही रहा इसलिए इन्हें शायरे-फ़ित्रत भी कहा जा सकता है। तीस साल के शेरी सफ़र में उन्होंने उर्दू शेरो-अदब को 23 शेरी मज्मूए दिए इससे उनकी ज़ूदगोई और शेर कहने की रफ़्तार का बख़ूबी अंदाज़ा लगाया जा सकता है। 'मयंक' ने नात, हम्द, सलाम, मनक़बत, मर्सिया, भजन, गीत, नज़्म, दोहे, रूबाई, क़ता और ग़ज़ल सभी अस्नाफ़े-सुख़न में भरपूर तबा आज़माई की है मगर बुनियादी तौर पर वह ग़ज़ल के शायर हैं।

वैसे तो अमीर ख़ुसरों को हिन्दी-उर्दू शायरी की साझा विरासत का अमीन कहा गया है। लेकिन जदीद तहक़ीक़ के मुताबिक़ उर्दू शेरो-अदब की तारीख़ में ख़ालिस उर्दू का पहला शायर 'वली' दकनी ('वली' गुज़राती) और पहला साहिबे-दीवान शायर

क़ुली क़ुतुब शाह को ही तस्लीम किया गया है और इसे भी हुस्ने-इत्तेफ़ाक़ ही कहिए कि दोनों ही शोअरा का तअल्लुक़ सरज़मीने-दकन से ही है। इसके बाद हर दौर में बेश्तर शोअरा ने अपना शेरी-दीवान मुरत्तब किया है लेकिन मौजूदा दौर में दीवान की तरतीब का रिवाज अब बिलकुल ख़त्म सा होता जा रहा है। वैसे तो एक ही शायर के कई-कई शेरी मज्मूए हमें देखने को मिल जाते हैं मगर साहिबे-दीवान शायरों का शुमार तो अब उँगलियों पर ही किया जा सकता है। दीवान में हरूफ़े-तहज्जी के ऐतबार से ग़ज़लों को तरतीब दिया जाता है। यानी इसमें 'अलिफ़' से 'ईए' तक सभी रदीफ़ (शेर के दूसरे मिस्रे का आख़िरी हर्फ़) की ग़ज़लें मौजूद होती हैं। ज़ाहिर है कि यह काम अगर नामुम्किन नहीं तो मुश्किल ज़रूर है।

'मयंक' अकबाराबादी ने सन् 2002 में अपना उर्दू शेरी दीवान 'दीवान-ए-मयंक' नाम से मुरत्तिब किया जिसे 'फ़ैज़ी आर्ट प्रेस', गोरखपुर ने उर्दू रस्मुल ख़त एवं 'साधना पॉकेट बुक्स', दिल्ली ने देवनागरी लिपि में शाया किया। इसमें एक हम्द पाक और 257 ग़ज़लों पर मुश्तमिल उनकी कुल शेरी कायनात 288 सफ़हात पर फैली हुयी है। जो 'मयंक' का अज़ीम शाहकार है, जिस पर उर्दू शेरो-अदब हमेश नाज़ करेगा।

यूँ तो 'मयंक' साहब बुनियादी तौर पर उर्दू के शायर हैं मगर इन्होंने जहाँ हम्द, नात, सलाम, मन्क़बत और मर्सिये कहे हैं वहीं बेशुमार भजन, ईश वंदना, सरस्वती वंदना, प्राचीन देवी-देवताओं की स्तुतियाँ, महाभारत, रामायण और महापुराणों के प्रसंगों को भी बड़े सलीक़े से नज़्म किया है। जहाँ इनके अनकों गीत, ग़ज़ल संग्रह शाया हुई हैं वहीं हम्दिया और नातिया मज्मूए 'करम-ब-करम', 'सिम्त काशी से चला' एवं 'नज़राना-ए-अक़ीदत' उर्दू रस्मुल ख़त में तो वहीं 'मयंक भजनावली', 'वन्दे-मातरम', 'भीम के सपनों वाला हिन्दुस्तान' 'मयंक के गीत-गीतिकाएं' और 'कुछ गीत अनाम के नाम' देवनागरी लिपि में भी शाया हो कर मक़बूले-ख़ासो-आम हो चुके हैं। लिहाजा उर्दू शेरी दीवान की इशाअत के बाद अब उन्होंने हिन्दी वर्ण माला 'अ' से 'ज्ञ' तक सिलसिलेवार रदीफ़ में भी ग़ज़लें कह लीं और अभी पिछले ही माह फरवरी 2014 में जब मध्य रेल्वे, भोपाल में 'एक शाम मयंक के नाम' आयोजित कर उनका सम्मान किया गया तो एक मुलाक़ात में उन्होंने बताया कि उर्दू में 'दीवान-ए-मयंक' के बाद मैंने उसी तर्ज़ पर हिन्दी वर्ण माला 'अ' से 'ज्ञ' तक की सिलसिलेवार रदीफ़ पर भी ग़ज़लें कह ली हैं। यह सुनकर मुझे बड़ी हैरत हुई कि 'मयंक' साहब कह क्या रहे हैं? यह तो हिन्दी काव्य-जगत में उनका एक अज़ीम कारनामा साबित होगा। इससे पहले किसी शायर या कवि के दिमाग़ में भी यह बात नहीं आयी होगी क्योंकि प्रारंभ से ही हिन्दी में दीवान कहने की प्रथा ही नहीं रही है।

हिन्दी में कुछ वर्ण मसलन 'ङ', 'ण', 'ञ', 'क्ष' तो ऐसे हैं जिसकी रदीफ़ पर शेर कहना जू-ए-शीर लाने के मुतरादिफ़ है। हिन्दी वर्णमाला में कुल 49 वर्ण हैं। 'मयंक' साहब चूँकि उर्दू के शायर हैं अत: 'क़', 'ख़', 'ग़' और 'ज़' जैसे उर्दू के हुरूफ़ को भी

रदीफ़ बनाया हैं। इस तरह हिन्दी-उर्दू के कुल 51 हुरूफ़ (वर्ण) को रदीफ़ बनाकर कुल 211 ग़ज़लें कही हैं जो अपने आप में अहमियत का हामिल है। यह तो सिर्फ़ 'मयंक' जैसे ज़ूदगो और जुनूनी बाकमाल शायर के ही दिमाग़ की उपज हो सकती है कि उन्होंने हिन्दी में भी दीवान कह डाला। मैं दावे के साथ यह बात कह सकता हूँ कि 'मयंक' अकबराबादी का यह अज़ीम शाहकार न सिर्फ़ हिन्दो-पाक बल्कि पूरी दुनिया में (जहाँ-जहाँ भी उर्दू एवं हिन्दी की बस्तियाँ आबाद हैं) इकलौता ही हिन्दी दीवान साबित होगा, जिस पर जाने वाली हर सदी नाज़ करेगी।

उर्दू रस्मुल ख़त में शेरी दीवान शाया होने के बाद अब देवनागरी लिपि में भी प्रकाशित इस 'दीवान-ए-मयंक' की एक ख़ास विशेषता यह है कि जहाँ हिन्दी वर्ण माला को रदीफ़ में इस्तेमाल किया गया है वहीं बाज़ ग़ज़लों में हिन्दी लफ़्ज़ों को काफ़िए के रूप में भी बड़ी हुनरमंदी के साथ उपयोग किया है और कहीं से भी कोई ग़ज़ल आपको ऐसी नहीं लगेगी की हिन्दी रदीफ़ की वजह से सोच-समझ कर या भर्ती की शक्ल में शामिल की गई है। 'मयंक' फ़ित्री शायर हैं और शेरो-अदब में बल्क़ब शायरे-फ़ित्रत मशहूर भी हैं। जहाँ तक ज़बानो-बयान का तअल्लुक़ है तो इसमें शामिल सभी ग़ज़लों में भी 'मयंक' का वही पुराना और मुंफ़रिद लबो-लहजा ही है लेकिन अशआर के मिज़ाज और तेवर कुछ-कुछ बदले हुए नज़र आते हैं। वैसे भी हिन्दी-उर्दू मिश्रित हिन्दोस्तानी ज़बान तो 'मयंक' की पहचान ही रही है, जिसमें पुख़्तगी, सलासत, नग़्मगी, फ़साहतो-बलाग़त सब कुछ ही तो मौजूद होता है।

'शेरी' अकादमी, भोपाल जनाब के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी के इस अज़ीमुश्शान और पहले हिन्दी शेरी दीवान 'दीवान-ए-मयंक' शाया करने में बेहद फ़ख़्र महसूस कर रही है और उन्हें दिल की गहराईयों से मुबारकबाद पेश करती है। मुझे यक़ीन है कि क़ारीयीन और पाठकों में भी यह अनूठा हिन्दी शेरी दीवान हाथों-हाथ लिया जाएगा और इसकी भरपूर पज़ीराई भी होगी।

महासचिव
'शेरी' अकादमी, भोपाल
4-आम वाली मस्जिद रोड, जहाँगीराबाद,
भोपाल-462008 (म.प्र.)
मो. 09425377323
E-mail: maqboolwajid@gmail.com

भोपाल
दिनांक : 31 मार्च 2014 ई.

कुछ अपने बारे में

डॉ. के.के. सिंह 'मयंक' अकबराबादी

शायरी और रेलवे की ज़िम्मेदारी से भरी नौकरी... दोनों ही एक नदी के दो किनारों जैसे हैं। फिर भी, ज़िन्दगी दोनों का बोझ उठाए चलती रही। निर्धारित समय पर रेलवे की सेवा ने तो मुझे मुक्त कर दिया लेकिन न ही शायरी मुझे छोड़ने पर आमादा है और न मैं इसको। साहित्य-अदब की इस दुनिया के सफ़र में कब 23 किताबें छप गईं और कैसे छपीं इसका अन्दाज़ा भी नहीं हो सका। इनमें मेरा एक संग्रह दीवान भी है। दीवान की इचना ने कुछ समय के लिए मुझे मुश्किलों में ज़रूर डाला क्योंकि इसमें रदीफ़ के आख़िरी अक्षर को लेकर, उर्दू के 'अलिफ़' से 'ईए' तक के हरूफ़ को इस्तेमाल करना होता है। ऊपर वाले की मेहरबानी, दोस्तों के मश्वरे और मेरी धर्मपत्नी 'सरोज' के त्याग, स्नेह तथा सहयोग ने इस कठिन कार्य को भी आसान बना दिया।

नौकरी से रिटायरमेंन्ट के बाद, वक़्त की कोई कमी ही नहीं थी। बच्चे अपनी-अपनी ज़िम्मेदारियों के साथ दूसरे शहरों में थे। घर में सिर्फ़ हम पति-पत्नी, लिहाज़ा एक के बाद एक के मुहावरे की तरह कुल 23 कविता एवं ग़ज़ल संग्रह भी प्रकाशित हो गए। हिन्दी-उर्दू की कुछ पत्रिकाओं ने मेरे विशेषांक भी छापे। कुछ अख़बारों में लेख-इन्टरव्यू का सिलसिला भी चलता रहा और लेखनी भी बदस्तूर चलती रही। कवि सम्मेलन, मुशायरे, गोष्ठियाँ, सेमिनार भी होते रहे लेकिन तबीयत में एक अजीब सी बेचैनी थी। प्रकाशकों का भी निरन्तर दबाव था, नए ग़ज़ल-संग्रह के लिए मगर न जाने क्यों उन प्रस्तावों पर भी मन नहीं लगा।

इसी दौरान, एक दिन मेरे मित्र 'सरवत' जमाल ने मुझ से किसी नए संग्रह के विषय में पूछा तो मैंने प्रकाशकों के पत्र, कुछ प्रशंसकों के ई-मेल उनके सामने रखे और अपनी तबीयत की बेचैनी बताई। उन्होंने कुछ देर सोचने के बाद कहा कि आप हिन्दी वर्णमाला के अनुसार एक दीवान संकलित क्यों नहीं करते। उर्दू में तो आपका दीवान आ ही चुका है और देवनागरी में भी उसका प्रकाशन हुआ था। अब हिन्दी वर्णमाला का दीवान तरतीब दें। उन्होंने यह भी कहा कि उनकी जानकारी में अब तक कोई भी 'हिन्दी दीवान' प्रकाशित नहीं हुआ है।

मैंने 'सरवत' जमाल के इस मश्वरे पर विचार किया और मुझे एहसास हुआ कि मेरी बेचैनी थोड़ी शांत हो रही है। अ से ज्ञ तक के शब्द ढूंढना, उन्हें रदीफ़ के रूप में इस्तेमाल करते हुए ग़ज़लें कहना, कांटों भरी राह के सफ़र जैसा था फिर यह एक ख़ुद को चुनौती देने जैसा मामला भी था, शायद इसीलिए उत्साह और जोश ने इस मुश्किल का सामना भी आसानी से कर लिया और जिस थोड़े से समय में यह दीवान संकलित हुआ, उस पर मुझे स्वयं भी आश्चर्य है।

युद्ध स्तर पर किए गए इस कार्य को सम्पन्न करने में मेरी धर्मपत्नी सरोज के सहयोग और त्याग का ज़िक्र मैं इसलिए करना चाहूँगा क्योंकि दूसरे रचनाकारों को रचना-कर्म में, घर-परिवार से क्या सहयोग मिलता है, उससे मैं भली-भाँती परिचित हूँ। 'रिसाला-ए-इन्सानियत' भोपाल के प्रधान सम्पादक जनाब मक़बूल 'वाजिद' साहब की मुहब्बतें, उनका प्यार भरा मीठा-मीठा दबाव और हर दूसरे-तीसरे दिन फोन पर संकलन की प्रगति के बारे में सूचना प्राप्त करना और अपने क़ीमती मश्वरों से नवाज़ते रहना, ऐसी प्यार भरी बन्दिशें मुझ पर डाली गईं कि अगर यह सब कुछ मेरे साथ न होता तो शायद अभी यह दीवान आप के हाथों में न होता।

इस दीवान की रचना में, मेरे सानिध्य में रहकर मेरे दोस्त 'सरवत' जमाल ने जो भूमिका निभाई है, उसके लिए मैं उनका शुक्रिया भी अदा नहीं करूँगा क्योंकि यह दोस्ती की तौहीन होगी। मेरी निराशा के समय में उनका प्रोत्साहन देना, विलम्ब को महसूस करके दफ़्तर से अवकाश लेकर जिस तरह मेरा मनोबल बढ़ाकर इन्होंने मुझसे रचनाएं लिखवा लीं, अब सोचता हूँ तो आश्चर्य ही होता है।

ख़ैर मुझे जो कहना था, कह चुका। किताब आपके हाथों में है। आपकी प्रतिक्रिया की मुझे प्रतीक्षा रहेगी। आपके दो शब्द मेरा हौसला बढ़ाने और ग़ल्तियों से सबक़ लेने में मददगार होंगे।

इसी आशा के साथ विदा।

लखनऊ
दिनांक : 22 मार्च 2014

'ग़ज़ल'-5/597, विकास खण्ड,
गोमतीनगर, लखनऊ-226010
मो. 09415418569

एक रौशन फ़िक्र शायर - 'मयंक' अकबराबादी

'सरवत' जमाल

बहुत पुरानी बात नहीं, यही कोई 18-19 साल पहले, एक दोस्त ने ग़ज़लों का संग्रह भेंट किया जिसमें कई शायरों की ग़ज़ले थीं। पन्ने पलटता रहा, एक ग़ज़ल पर उंगलियाँ थम गईं, नज़रें जम गईं, **'मैंने कहा हो जलवागर, उसने कहा नहीं नहीं।'** पन्ने पलटे और शायर का नाम ढूंढा-के.के. सिंह 'मयंक'। कुछ वर्षों बाद मेरे एक रेलकर्मी मित्र ने 'मयंक' साहब के गोरखपुर ट्रान्सफर होने की ख़बर सुनाई। इतने अरसे में मैं 'मयंक' साहब की शायरी के रुत्बे से वाक़िफ़ हो चुका था। मिलने की तमन्ना हुई लेकिन उनका भारी भरकम ओहदा सुनकर हिम्मत छूट गई। कुछ ही दिनों बाद एक कवि गोष्ठी में 'मयंक' साहब से मुलाक़ात हुई तो उनकी सादगी, नर्मी, शराफ़त, इन्सानियत ने ऐसे जादू चलाए कि उम्र में फ़र्क़ होने के बावजूद, जो दोस्ती क़ायम हुई वह शायद ही कभी ख़त्म हो।

'मयंक' साहब 23 किताबों के ख़ालिक़ हैं। इनमें ग़ज़लों का एक दीवान भी है जो उर्दू और हिन्दी, दोनों भाषाओं में अलग-अलग प्रकाशित हुए। 23 किताबें मार्केट में आने के बाद तो आम शायर सुकून की साँसें लेकर आराम फ़रमाता, मगर 'मयंक' साहब को तो न सुकून की चाहत न आराम की ख़्वाहिश। हफ़्ते-दस दिन बाद होने वाली हर मुलाक़ात पर उनकी डायरी आधे से एक दर्जन नई ग़ज़लों से भरी मिलती। शेरो-अदब के लिए ऐसा करना जुनून कहलाता है लेकिन 'मयंक' साहब के इस जुनून में भी ज़रूरियाते-ज़िन्दगी का कोई काम रुकता नहीं है। बच्चे दूसरे शहरों में रोज़गार की वजह से बस गए हैं। लखनऊ में 'मयंक' साहब और 'सरोज' भाभी हैं, सिर्फ़ कुछ ख़िदमतगारों के साथ। रिश्तेदारियाँ भी हैं, दोस्त अहबाब हैं, रेलवे आफ़ीसर्स क्लब की ज़िम्मेदारियाँ हैं, दिल के मरीज़ भी हैं, फिर भी सारे काम निपटाते हुए, शायरी के लिए वक़्त कैसे निकलता है, यह या तो वह ख़ुद जानते हैं या ऊपर वाला।

अभी कुछ दिनों पहले मैं उनसे मिलने जा रहा था। घर से पहले ही चौराहे पर नज़र आए। मालूम हुआ दूध ख़त्म हो गया था। दूध लेकर लौटे और चाय की चुस्कियों के दौरान फ़रमाने लगे, 'लोग कह रहे हैं, बहुत दिनों से आपकी कोई नई किताब नहीं आई। प्रकाशकों का भी दबाव है। मैं ग़ज़ल-संग्रह से ऊब गया हूँ।' उनकी बातें सुनकर अचानक मुझे एक आइडिया सूझा, मैंने उनसे दीवान की रचना के लिए कहा। उन्होंने कहा कि वो तो छप चुका है। मैंने उन्हें हिन्दी वर्णमाला पर आधारित दीवान तैयार करने के लिए कहा। वह फ़ौरन तैयार हो गए और उनके उत्साह का अन्दाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि अगली सुबह ही उन्होंने फ़ोन पर बताया कि काम शुरू हो चुका है और वह चार ग़ज़लें कह भी चुके हैं।

दीवान तरतीब देना बहुत मुश्किल काम है। आम तौर से लोग ग़ज़ल-संग्रह को ही दीवान समझते हैं जबकि ऐसा नहीं है। दीवान में रदीफ़ के आख़िरी अक्षर को लेकर, वर्णमाला के पहले से अन्तिम अक्षर (उर्दू में 'आलिफ़' से 'ये' तक और हिन्दी में 'अ' से 'ज्ञ' तक) तक को शामिल करके ग़ज़ले कहनी होती हैं। उर्दू अदब में भी बहुत कम शायरों ने दीवान तरतीब दिए हैं, 'मयंक' साहब यह काम बरसों पहले अंजाम दे चुके हैं।

'मयंक' साहब का यह दीवान हिन्दी वर्णमाला क्रम पर आधारित है। मेरी जानकारी के अनुसार, अब तक किसी शायर का हिन्दी वर्णमाला क्रम पर आधारित कोई दीवान प्रकाशित नहीं है। इस एतबार से यह एक अनूठा प्रयोग है जिसका अनुसरण कालान्तर में भी लोग करते रहेंगे।

मुझे 'मयंक' साहब की शायरी के बारे में कुछ नहीं कहना। जो बात सारी दुनिया को मालूम है, उसे मैं बताकर अपनी शिनाख़्त ज़ाहिर क्यों करूँ। लेकिन मुझे यह ज़रूर बताना है कि उर्दू के शायर के.के. सिंह 'मयंक' ने, इस दीवान के लिए जो हिन्दी ग़ज़लें कही हैं, उससे हिन्दी ग़ज़लकार भी आश्चर्यचकित और अचम्भित अवश्य होंगे। यहाँ मैं एक बात वाज़ेह करता चलूँ कि मैंने 'मयंक' साहब को बहुत पढ़ा और सुना है, ज़ाहिर है कि उनके कुछ अशआर भी मेरे ज़ेह्न पर नक़्श हो गये हैं। ऐसे ही कुछ शेर आप भी मुलाहिज़ा फ़र्माएँ और लुत्फ़ अंदोज़ हों :-

या ख़ुदा फिर कोई पैदा हो सदाक़त का अमीन
एक मुद्दत से निगाहों को है इन्साँ की तलाश

वे वतन पर मिट गए और ये मिटा देंगे वतन
जानते हो किस तरफ़ मेरा इशारा है मियाँ

ज़रूरी तो नहीं हम साहिबे-ईमान हो जाएं
मगर इतना ज़रूरी है कि हम इंसान हो जाएं
ख़ुदा का शुक्र है हम हिन्दुओं में
कोई शब्बीर का क़ातिल नहीं है

हिन्दी ग़ज़लों का यह दीवान, 'मयंक' साहब की इज़्ज़त और शोहरत में तो इज़ाफ़ा करेगा ही, हिन्दी ग़ज़लकारों को हिन्दी दीवान के लिए प्रेरणास्रोत भी बनेगा, ऐसा मेरा मानना है और इस दीवान को पढ़ने के बाद शायद आप भी मेरी बात का समर्थन करेंगे।

बस्ती — **पीली कोठी, राजा मैदान, पुरानी बस्ती,**
दिनांक : 25 मार्च 2014 — **ज़िला-बस्ती-272002, मो. 07505660714**

ईश वन्दना

वो जो बृजनन्दन के चरणों में समर्पित हो गए।
पाप उनके यमुना मैया में विसर्जित हो गए।।

गोपियों के वस्त्र जितने भी चुराए श्याम ने,
द्रोपदी के चीर में जा कर समाहित हो गए।

उम्र भर शिक्षा ग्रहण करके भी जो अनपढ़ रहे,
ढाई आखर कृष्ण के पढ़ कर वो पण्डित हो गए।

जब अहं ब्रह्मास्मि कह कर रूप दिखलाया विराट,
देखने वाले चकित, विस्मित, अचंभित हो गए।

व्याख्यानों में जहाँ गहराइयाँ बिल्कुल न थीं,
कृष्ण का सन्दर्भ पा कर सारगर्भित हो गए।

सूर, मीरा, राधिका, रसखान, उद्धव और 'मयंक',
कृष्ण का गुणगान कर, दुनिया में चर्चित हो गए।

(अ)

किसलिए कहते हो हमदम अलविदाअ।
फिर मिलेंगे, क्यों कहें हम अलविदाअ।।

ख़ुश्क मौसम आ गया फिर लौटकर,
हम तुम्हें कहते हैं शबनम, अलविदाअ।

वक़्ते-रुख़्सत जब वो आए सामने,
लब पे आया आख़िरी दम, अलविदाअ।

मौत ने दुनिया छुड़ा दी है मगर,
मिल गई जन्नत, जहन्नम अलविदाअ।

तुम बहुत ख़ुश हो 'मयंक' अब तो कहो,
दर्दो-ग़म, आंसू के मौसम, अलविदाअ।

शाम ढलते ही दिऐ के साथ जल जाती है शम्अ।
रोशनी के वास्ते फिर ख़ुद को पिघलाती है शम्अ।।

ये दरो-दीवार, खिड़की, कार्निस रोशन करे,
मेरे कमरे को सुनहरा नूर पहनाती है शम्अ।

ख़ुद ब ख़ुद जलते हैं परवाने मगर कहते हैं लोग,
क्या पतंगे को ज़लाकर ही सुकूं पाती है शम्अ।

उसके आंसू देखने वाला यहाँ कोई नहीं,
सोचते हैं सब यही क्यों नाज़ दिखलाती है शम्अ।

जानती है, सुब्ह आते ही बुझा दी जाएगी,
फिर भी जब तक जल रही होती है, इठलाती है शम्अ।

क़ब्र पर ग़मगीन होकर रोती रहती है सदा,
चर्च में, मन्दिर में, मस्जिद में तो इतराती है शम्अ।

कैफ़ियत उस वक़्त की मालूम है तुमको 'मयंक',
शायरों के सामने महफ़िल में जब आती है शम्अ।

(आ)

यही मौसम है मिल जाने का तू आ।
मुझे करनी है तुझसे गुफ़्तगू, आ।।

तेरे अरमान हो जाएंगे पूरे,
मेरे दामन में रख दे आरज़ू, आ।

चल, अब दुनिया का दामन छोड़ दें हम,
यहाँ बचती नहीं है आबरू, आ।

बुराई पीठ पीछे कर रहा है,
अगर हिम्मत है मेरे रूबरू, आ।

कहा है जब तो करके भी दिखा दे,
वो अंगारे पड़े हैं, जा के छू, आ।

अज़ानों की सदा आने लगी है,
सभी करने लगे हैं अब वज़ू, आ।

गई ससुराल बेटी, चल 'मयंक' अब,
तुझे आवाज़ देती है बहू, आ।

ख़त्म करनी है दोस्ती, मत आ।
मैं भी कहता हूँ तू कभी, मत आ।।

मौत का ख़ौफ़ है अगर तुझको,
मेरे हिस्से की ज़िन्दगी, मत आ।

मुझको रिश्ते निभाना आता है,
चाहिए तुझको कितनी क़ीमत, आ,

बूंद से प्यास क्या बुझेगी मेरी,
पास मेरे तू दो घड़ी, मत आ।

रोक देगा समाज तेरे क़दम,
तुझको सौगन्ध प्यार की, मत आ।

चन्द सांसें बची हुई हैं अभी,
मेरे नज़दीक तू अभी, मत आ।

शाम का वक़्त है 'मयंक', ठहर,
लोग करते हैं बन्दगी, मत आ।

किसी के हुस्न को लोगों ने क्या से क्या बना डाला।
कभी सूरज, कभी चन्दा, कभी तारा बना डाला।।

ख़ुदा ने सबको क़द बख़्शे थे, कुछ ऊँचाई बख़्शी थी,
सियासत ने मगर इन्सान को बौना बना डाला।

हमें तो धर्म की, ईमान की इज़्ज़त बचानी थी,
हमीं ने धर्म और ईमान को धंधा बना डाला।

ग़रीबों ने अदब-तहज़ीब से इज़्ज़त उन्हें दी थी,
अमीरों ने अकड़ में ख़ुद को रब जैसा बना डाला।

'मयंक' उल्फ़त, मुहब्बत, प्यार से क़ायम है ये दुनिया,
मुहब्बत ने तो नन्हे बीज को पौधा बना डाला।

क्या मेरी शान हो, गेरुआ या हरा।
कौन पहचान हो, गेरुआ या हरा।।

आप हर दर पे क्यों सर झुकाते फिरें,
एक ईमान हो, गेरुआ या हरा।

कोई बेजान शय तो रंग लीजिए,
कैसे इन्सान हो गेरुआ या हरा।

आदमीयत रहे, चाहता हूँ यही,
वरना तूफ़ान हो गेरुआ या हरा।

सब पे चढ़ जाएगा प्यार का रंग भी,
पहले बेजान हो गेरुआ या हरा।

देश तेरा भी है, देश उसका भी है,
क्यों मुसलमान हो गेरुआ या हरा।

अब तो फ़सलें 'मयंक' आप बतलाइए,
बोलिए धान हो गेरुआ या हरा।

मेरी तक़दीर के कातिब, मेरी पहचान लिख देना।
मेरे तन के हर इक हिस्से पे हिन्दुस्तान लिख देना।।

मुझे मन्दिर भी प्यारा है, मुझे मस्जिद भी प्यारी है,
कहीं भगवान लिख देना, कहीं रहमान लिख देना।

वतन के काम आकर आबरू रक्खे घराने की,
मेरी क़िस्मत में तू ऐसी कोई सन्तान लिख देना।

मुझे हिन्दू –मुसलमां कुछ भी लिख देना, मगर पहले,
वतन पर जॉनिसारी को मेरा ईमान लिख देना।

वतन की शान में कुछ शेर कहने की तमन्ना थी,
कहाँ चाहा था मैंने कब कोई दीवान लिख देना।

किसी को अह्ले–ज़र लिखना, किसी को शोहरतों वाला,
'मयंक' इतना ही चाहे है, उसे इन्सान लिख देना।

तालीम का हक़ यूं भी अदा करते हैं उलमा।
आफ़त कोई आए तो दुआ करते हैं उलमा।।

हैं दीन के, दुनिया के हर इक इल्म से वाक़िफ़,
फिर भी यहां दिन रात पढ़ा करते हैं उलमा।

जो इनसे मिला, उसको तो होती है अक़ीदत,
मक्कार ये कहते हैं कि क्या करते हैं उलमा।

आंधी हो कि तूफ़ान, अंधेरा कि उजाला,
हर हाल में बस शुक्रे–ख़ुदा करते हैं उलमा।

कुछ लोग 'मयंक' इन पे कसा करते हैं ताने,
और तंज़ के पत्थर भी सहा करते हैं उलमा।

करनी थी जब रहमत मौला।
कैसे आई क़यामत मौला।।

बतला दे, किसने बांटी है,
इन्सानों में नफ़रत मौला।

क्या मुर्दा हैं तेरे बन्दे,
सब के सब बेहरकत मौला।

प्यार–मुहब्बत इस दुनिया से,
देख ले, हो गए रुख़्सत मौला।

आख़िर ऐसा क्यों होता है,
कमज़ोरों पर आफ़त, मौला।

सब दौलत को पूज रहे हैं,
खो कर अपनी इज़्ज़त मौला।

बख़्श 'मयंक' को थोड़ी बरकत,
अब तो हो गई मुद्दत मौला।

कुछ इतना हो गया दुश्वार पैसा।
अचानक बन गया अवतार पैसा।।

शराफ़त और इज़्ज़त सब किनारे,
हुआ है इन दिनों मेयार पैसा।

शिनाख़्त इन्सान की होती है इनसे,
हवेली, फ़ार्म हाउस, कार, पैसा।

कभी ऊँचाई पर रखता है क़ीमत,
गिरा भी देता है बाज़ार पैसा।

नज़र आता है भोला और मासूम,
मगर फ़ित्रत से है मक्कार पैसा।

मैं उसका पेट भरना चाहता था,
भिखारी ने कहा, सरकार पैसा।

'मयंक' इससे मुझे ख़तरा नहीं है,
बने दुश्मन हज़ारों बार पैसा।

मुफ़लिसी के बीज तो फिर बो गई पागल हवा।
मेरे खेतों से उड़ाकर ले गई बादल हवा।।

उनको जब देखा कि वो हैं माइले-तहज़ीबे-नौ,
उनकी पलकों से उड़ाकर ले गई काजल हवा।

इसको हम फैशन कहें या शौक़े-उरियानी कहें,
दोश से हर नाज़नीं के हो गया आंचल हवा।

उनके कूचे में चला करती है इस अंदाज़ से,
बांध कर आई हो जैसे पांव में पायल हवा।

दीदनी है वह शरारत और शोख़ी का समां,
एक चंचल से मिला करती है जब चंचल हवा।

क्या हुआ जो आज उनके लब पे ताले पड़ गये,
अपनी-अपनी बज़्म में जो बांधते थे कल हवा।

मुद्दतों के बाद आई भी तो गुलशन में 'मयंक',
पत्ते-पत्ते को शजर के कर गई घायल हवा।

ले गयी आंखों से मेरी ग़म ज़िया।
हो गई यूं रफ़्ता-रफ़्ता कम ज़िया।।

आपके बख़्शे हुए यह दाग़े-दिल,
देते रहते हैं हमें पैहम ज़िया।

इन सियह रातों का सीना चीर कर
ऐ ज़माने देंगे तुझको हम ज़िया।

आंधियों का ज़ोर था कल रात भर,
रात भर करती रही मातम ज़िया।

देखना फैलेगी इक दिन रोशनी,
तीरगी का सर करेगी ख़म ज़िया।

तीरगी ने ज़ख़्म बख़्शे थे मुझे,
रख रही है ज़ख़्म पर मरहम ज़िया।

क्यों मुहब्बत के चराग़ों की 'मयंक',
हो रही है आजकल मद्धम ज़िया।

थीं हवाएं तुंद कितनी मुझको अंदाज़ा न था।
क्योंकि जिस कमरे मैं था उसमें दरवाज़ा न था।।

वक़्त बदला तो सभी ने अपनी नज़रें फेर लीं,
तुम भी नज़रें फेर लोगे, इसका अंदाज़ा न था।

ख़ून दामन पर न था गो दर्द था बेइंतिहा,
क्योंकि दिल का ज़ख़्म गहरा था मगर ताज़ा न था।

दौरे-हाज़िर की ये दुल्हन किस तरह लगती हसीं,
जबकि चेहरे पर हया और शर्म का ग़ाज़ा न था।

हर कोई बनता है 'ग़ालिब', 'मीर', 'मोमिन' और 'फ़िराक़',
जब सुना हमने तो कोई शेर भी ताज़ा न था।

वह वफ़ाओं का जफ़ाओं से सिला देते रहे,
क्या 'मयंक' उनकी मुहब्बत का ये ख़मियाज़ा न था।

मेरी मय्यत पर आ जाना पहन के जोड़ा शादी का।
दुनिया वाले भी तो देखें जश्न मेरी बर्बादी का।।

हुस्न और इश्क़ के बीच में अक्सर चांदी की दीवारें हैं,
रास नहीं आता मुफ़लिस को प्यार किसी शहज़ादी का।

देख के मेरी हालत मौसम की भी आँखें नम हैं आज।
तुम भी तड़प उट्ठोगे सुनकर ज़िक्र मेरी बरबादी का।

दूर क़फ़स से हूँ मैं लेकिन यादे-माज़ी में हूँ क़ैद।
मतलब ग़लत लगा बैठे हैं लोग मेरी आज़ादी का।

किसकी अदालत में वह जाए, किससे मांगे अब इंसाफ़,
कोई भी पुरसा हाल नहीं है आज यहाँ फ़रियादी का।

जो भी चाहो शौक़ से पहनो तन पर लेकिन दीवानो,
तार-तार तुम मत कर देना पैराहन आज़ादी का।

मुद्दत से मैं भटका रहा हूँ नफ़रत के सहरा में 'मयंक',
काश कोई रस्ता दिखला दे चाहत की, आबादी का।

हमीं से है अगर जलवा तुम्हारा।
हमारे बाद क्या होगा तुम्हारा।।

ख़ुदा मालूम क्यों रहता है हरदम,
नज़र के सामने चेहरा तुम्हारा।

हमीं ने तुमको मसनद पर बिठाया,
हमारे दम से है रुतबा तुम्हारा।

करम से गर रही महरूम दुनिया,
न लेगी नाम फिर दुनिया तुम्हारा।

जो वाक़िफ़ है तुम्हारी रहमतों से,
सहारा क्यों न वो लेगा तुम्हारा।

तुम्हारी बात में दम तो बहुत है,
मगर अच्छा नहीं लहजा तुम्हारा।

सभी जब मुब्तला हैं अपने ग़म में,
सुनेगा कौन फिर दुखड़ा तुम्हारा।

हज़ारों साल पर भारी नहीं क्या,
जो लम्हा प्यार में गुज़रा तुम्हारा।

मेरे बच्चों के लिए दो वक़्त का आटा न था।
हां मगर घर में मता-ए-ज़र्फ़ का घाटा न था।।

उसके मरने पर किसी की आंख में आंसू न थे,
ज़िन्दगी का जिसने मिल-जुल कर सफ़र काटा न था।

दोस्तों की दोस्ती ने दिल के टुकड़े कर दिए,
दुश्मनों ने तो कभी मेरा गला काटा न था।

जीत में तो जीत ही थी, हार में भी जीत थी,
था मुनाफ़ा ही मुनाफ़ा, प्यार में घाटा न था।

नफ़रतों की चोटियों पर बैठ कर रोता रहा,
जिसने दिल की खाइयों को प्यार से पाटा न था।

आपके दरबार में किसको मुआफ़ी चाहिए,
कह दिया तो कह दिया, फिर थूक कर चाटा न था।

दिल धड़कने की सदा आती रही थी ऐ 'मयंक',
साथ तन्हाई थी मेरे, फिर भी सन्नाटा न था।

ज़र्फ़ की मीज़ान पर हर दोस्त पहचाना गया।
हम ज़रा सी बात पर रूठे तो याराना गया।।

हम जो उनकी बज़्म से दामन झटक कर चल दिए,
ख़ुश हुए, कहने लगे, अच्छा है दीवाना गया।

मैं तो तौबा पर था क़ायम अपनी ऐ शेख़े-हरम।
ले के मुझको मयकदे में शौक़े-रिंदाना गया।।

देखता किस दिल से उसको इश्क़ में जलते हुए,
शम्ए-सोज़ां की तरफ़ ख़ुद बढ़के परवाना गया।

हर तरफ़ महफ़िल में उसकी क़हकहों की गूंज थी,
मैं सुनाने उसको नाहक़ ग़म का अफ़साना गया।

यक बयक रुख़ पर सभी के इक उदासी छा गई,
उठके तेरी बज़्म से जब तेरा दीवाना गया।

क्यों न करता वह सितमगर ऐ 'मयंक' उसको क़बूल,
जिसकी ख़िदमत में मैं लेकर दिल का नज़राना गया।

नाशाद था मैं और भी नाशाद हो गया।
जब से ग़मों की क़ैद से आज़ाद हो गया।।

कोई दुआ न हक़ में मिरे काम आ सकी,
बर्बाद मुझको होना था, बर्बाद हो गया।

आसान किस क़दर है मुहब्बत का यह सबक़,
बस एक बार मैंने पढ़ा, याद हो गया।

मैं मांगने गया था वहां ज़िंदगी मगर,
फ़रमान मेरी मौत का इरशाद हो गया।

दिल तोड़ने पे मेरा ज़माना लगा रहा,
दिल टूटता भी कैसे जो फ़ौलाद हो गया।

हम तो तमाम उम्र वहीं के वहीं रहे,
वह चंद शेर कह के ही उस्ताद हो गया।

जब से वो मेरे दिल में मकीं हो गए 'मयंक',
उजड़ा हुआ मकान था, आबाद हो गया।

(इ)

कैसी उन्नति, किसकी उन्नति।
जब काग़ज़ पर होगी उन्नति।।

कैसे दावों को सच मानें,
होती तब तो दिखती उन्नति।

पहले सुनकर खुश होते थे,
अब लगती हैं गाली उन्नति।

किस पर सीना तान रहे हो,
मुट्ठी भर लोगों की उन्नति।

कैसे इसको अर्थ बताऊं,
पूछ रही है बच्ची उन्नति।

राजनीति की छाया पाकर,
क्यों है सहमी-सहमी उन्नति।

बस 'मयंक' धीरज रक्खो तुम,
ठीक समय पर होगी उन्नति।

राजनीति के महल में देखी हाहाकारी ज्योति।
कितने दिन तक जल पाएगी यह सरकारी ज्योति।।

सारी-सारी रात अंधेरों पर थी भारी ज्योति,
सूरज के उगते ही उस पर सब कुछ वारी ज्योति।

कच्ची बस्ती में इक दीपक जलता है हर शाम,
रोज़ बुझा देने को आतुर है दरबारी ज्योति।

एक शिक्षिका बस्ती-बस्ती बांट रही है ज्ञान,
हर बच्चे तक पहुंच रही है बारी-बारी ज्योति।

आग भयानक हो तो उसको ज्योति नहीं कहते,
जबकि कभी तो बन जाती है इक चिंगारी ज्योति।

ईसा, नानक, गौतम, गांधी रोज़ नहीं मिलते,
सदियां गुज़रें तब मिलती है इच्छाधारी ज्योति।

सबको रास नहीं आते हैं दीप 'मयंक' अकसर,
दीप जलाने वालों को लगती है प्यारी ज्योति।

(ई)

पहले दिल में आग लगाई।
फिर नैनों में जल भर लाई।।

ख़ुद औरों से मांग रहे हैं,
अब इस युग के हातिमताई।

तू तो सुख का ही आदी है,
तू क्या जाने पीर पराई।

हार मिरी पहले से तय थी,
सच्चाई ने मुंह की खाई।

अब तो घर ही में दुश्मन है,
कैसा भाई, किसका भाई।

हां, पहले होती थी, लेकिन,
आज कहां है पन्ना दाई।

क्या 'मयंक', सरहद पर जाकर,
किसी नेता ने जान गंवाई।

पहले तो अच्छी तरह मेरी तलाशी ली गई।
फिर कहीं महफ़िल में जाने की इजाज़त दी गई।।

साथ मेरा छोड़ कर रुख़्सत हुई तब ज़िन्दगी,
जोंक बन कर जब लहू सारे बदन का पी गई।

इश्क़ में फिर भी वो मुझ से उम्र भर रूठा रहा,
गो मनाने की उसे भरपूर कोशिश की गई।

भूख़ ने आख़िर मिरे हाथों में कासा दे दिया,
आबरू जो कुछ बची थी, हाथ से वह भी गई।

हौसला कुछ और जीने का हमारा बढ़ गया,
जब कभी उम्मीद की कोई किरन देखी गई।

मौत आई और आकर ले गई आख़िर 'मयंक',
सौ तरह से एहतियात-ए-ज़िन्दगी बरती गई।

दोश पर ज़ुल्फ़-ए-सियह देखी जो लहराई हुई।
रह गई अपना सा मुंह लेकर घटा छाई हुई।।

कर दिया मशहूर उसको दोनों आलम में मगर,
उसकी शोहरत से ज़ियादा मेरी रुस्वाई हुई।

मुस्कुरा कर जब भी उलटी उसने चेहरे से नक़ाब,
दिल पे इक बिजली गिरी नागिन सी बल खाई हुई।।

जल उठे पलकों पे जब भी तेरी यादों के चराग़,
सुब्ह के मानिंद रोशन शाम-ए-तन्हाई हुई।

क्या सबा आई है होकर जलवा गाहे-नाज़ से,
चल रही है किस लिए गुलशन में इतराई हुई।

तोड़ हूं मैं अह्दे-तौबा, पारसाई की क़सम,
तेरी आंखों की मिले जो मुझको छलकाई हुई।

ख़ैरमक़दम के लिए ख़ुद उठ के आए वो 'मयंक',
अन्जुमन में इस क़दर मेरी पज़ीराई हुई।

रंजो-ग़म, दर्दो-अलम, आहो-फ़ुग़ां है ज़िन्दगी।
सैकड़ों उन्वान की इक दास्तां है ज़िन्दगी।।

जल रहे हैं ख़ारो-ख़स उनका धुआं है ज़िन्दगी,
शाख़े-गुल पर इक सुलगता आशियां है ज़िंदगी।

देखिए तो इक हुबाबे-मौजे-दरिया भी नहीं,
सोचिए तो एक बहरे-बेकरां है ज़िंदगी।

फ़र्शे-गेती पर फ़रिश्तों ने भी हिम्मत हार दी,
वह ग़मे-दिल सोज़ वह बारे-गिरां है ज़िन्दगी।

हैं लबों पर सर्द आहें, आंखों में आंसू भी हैं,
फिर भी जाने क्यों मिरी शोला फ़शां है ज़िन्दगी।

मुफ़लिसी ने छीन ली हम से हमारी हर ख़ुशी,
पहले जो थी, वो हमारी अब कहां है ज़िन्दगी।

दर्दे-कुलफ़त से न घबराओ 'मयंक' इस दौर में,
सब्रो-इस्तक़लाल का इक इम्तिहां है ज़िन्दगी।

जानिबे-सहरा कि सू-ए-गुलसितां ले जाएगी।
देखना ये है, हवा हमको कहां ले जाएगी।।

वह सितम ढाएगी इक दिन यह सियासत आपकी,
छीन कर लोगों के मुंह से रोटियां ले जाएगी।

छोड़ दे ऐ नाखुदा हमको, हमारे हाल पर,
जानिबे-साहिल हमें मौजे-रवां ले जाएगी।

दोस्ती रखने की चाहत, वह भी इस माहौल में,
देख लेना दुश्मनों के दरमियां ले जाएगी।

जानता हूँ क्या है मेरे चार तिनकों की बिसात,
फिर कोई आंधी उड़ा कर आशियां ले जाएगी।

ढूंढ ही ली हमने सीधी राह आख़िर ऐ 'मयंक',
जिस जगह मन्ज़िल है अपनी, यह वहां ले जाएगी।

यूं किसी ने ज़िंदगी भर की कमाई छीन ली।
जैसे शायर के क़लम से रोशनाई छीन ली।।

ख़्वाब, ख़ुशियों के दिखाकर तोड़ डाले इस तरह,
जैसे बच्ची को नई गुड़िया दिलाई, छीन ली।

आपने ख़्वाबों में आ कर हर ख़ुशी बख़्शी मगर,
छीन कर नींदें मेरी, सारी ख़ुदाई छीन ली।

आप ही बतलाइए यह भी कोई इंसाफ़ है,
चीज़ मांगे से अगर मिलने न पाई, छीन ली।

शैख़ जी ने मयकदे में रिंद की हर इक ख़ुशी,
देखिए, ईमान की देकर दुहाई छीन ली।

हम निभाते ही रहे सारे तकल्लुफ़ बज़्म में,
उस सितमगर ने मगर जो चीज़ भाई, छीन ली।

क्या कहा यारी निभाना काम मुश्किल है 'मयंक',
आपने तो बात मेरे लब पे आई छीन ली।

सिर्फ़ इतनी गुनहगार है ज़िंदगी।
ज़िन्दगी की परस्तार है ज़िंदगी।।

मौत की हर नफ़स मांगती है दुआ,
इस क़दर खुद से बेज़ार है ज़िंदगी।

रो रही है ख़ुदा जाने किसके लिए,
जाने किसकी तलबगार है ज़िंदगी।

दौरे-हाज़िर में जीना भी आसां नहीं,
और मरना भी दुश्वार है ज़िंदगी।

मत किसी से हिमायत की उम्मीद रख,
कौन किसका तरफ़दार है ज़िंदगी।

मैंने देखा है हर ज़ाविए से इसे,
वाक़ई एक आज़ार है ज़िंदगी।

हाथ पर हाथ रखकर जो बैठा रहे,
ऐ 'मयंक' उसकी बेकार है ज़िंदगी।

जहाँ जाओगे अय्यारी मिलेगी।
मुहब्बत में अदाकारी मिलेगी।।
भले इन्सान के भी ख़ूं में यारो,
लहू की शोबदाकारी मिलेगी।
नई तहज़ीब के शहरों में अकसर,
मुहब्बत की ही बीमारी मिलेगी।
अना और ज़र्फ़ की बस्ती में जाओ,
वहीं लोगों में ख़ुद्दारी मिलेगी।
हमेशा की तरह ऐ दोस्त तुझको,
यूं ही मुझसे वफ़ादारी मिलेगी।
जो चढ़ता है वही गिरता है अकसर,
बड़ों से यह समझदारी मिलेगी।
वफ़ादारी, कमीनों के लहू में,
अगर जांचोगे, ग़द्दारी मिलेगी।
ये जो सोए हैं फ़ुटपाथों पे इन्साँ,
इन्हीं लोगों में ख़ुद्दारी मिलेगी।
फ़ज़ा में ज़हर फैला है यहां पर,
तुम्हें अब झील भी खारी मिलेगी।
'मयंक' इस शहर में रहना संभल कर,
यहां हर चीज़ बाज़ारी मिलेगी।

क़र्ज़ अपने तमाम ले लेगी।
दोस्ती इन्तक़ाम ले लेगी।।

किसको मालूम था कि ग़द्दारी,
इतना ऊंचा मक़ाम ले लेगी।

तश्नगी ख़ुद ही बढ़ के साक़ी से,
अपने हिस्से का जाम ले लेगी।

पेट की आग, चन्द टुकड़ों पर,
जो भी मिलता हो काम, ले लेगी।

दिल के सौदे में आशिक़ी मेरी,
जो भी दोगे, वो दाम, ले लेगी।

अपने हाथों में प्यास रिन्दों की,
मयकदे का निज़ाम ले लेगी।

गोद में अपनी एक दिन ऐ 'मयंक',
रहमते-नातमाम ले लगी।

यह दिखावे की सभी हमदर्दियां जल जाएंगी।
पोंछिए मत मेरे आंसू उंगलियां जल जाएंगी।।

मत जलाओ नफ़रतों के सर्द मौसम में अलाव,
इक भी चिंगारी उड़ी तो बस्तियां जल जाएंगी।

इस हक़ीक़त से हैं शायद बेख़बर ऊंचाईयां,
कौन पूछेगा इन्हें गर पस्तियां जल जाएंगी।

शोला बनकर खिल रहे हैं सहने-गुलशन में गुलाब,
लब अगर रक्खेंगी इन पर तितलियां, जल जाएंगी।

उसकी यादों से निकल कर होश में आ बावरी,
वरना चूल्हे में तवे पर रोटियां जल जाएंगी।

गर यूं ही चढ़ती रही परवान यह रस्मे-जहेज़,
सेज पर चढ़ने से पहले डोलियां जल जाएंगी।

अपने तेवर हम बदल दें यह नहीं मुम्किन 'मयंक',
बल न जाएंगे ये गरचे रस्सियां जल जाएंगी।

पेट में चारा पड़े तो सूझती है दूर की।
रहम के क़ाबिल है वरना ज़िंदगी मजबूर की।।

अपने मतलब के लिए जिसने कभी बरता नहीं,
बात करता है वही अब बज़्म में दस्तूर की।

हक़ परस्ती का ख़ुदारा ज़िक्र रहने दीजिए,
कौन करता है यहां अब पैरवी मंसूर की।

आजकल के दौर की अल्लाह रे बेचैनियां,
कैफ़ियत जैसे बदन पर हो किसी नासूर की।

ज़ार-ज़ार आंसू बहाती है यहां मेहनतकशी,
देखकर हालत हमारे देश के मज़दूर की।

फिर उसी से जा रहा हूँ करने अर्ज़े-हाले-ग़म,
आज तक जिसने न कोई इल्तिजा मंज़ूर की।

बेसबब टकरा के तुमने संग-दिल से ऐ 'मयंक',
आईने सी ज़िंदगानी अपनी चकनाचूर की।

हथकड़ी जब लुहार तक पहुंची।
बेगुनाही फ़रार तक पहुँची।।

ख़ूबसूरत बना दिए पुतले,
जब भी मिट्टी कुम्हार तक पहुँची।

उस मिलन का अजीब मन्ज़र था,
जब वो मेरे मज़ार तक पहुंची।

कुछ न कुछ तो कमी रही होगी,
दोस्ती जो दरार तक पहुंची।

जब ग़रीबी से लड़ गई ममता,
उसकी पायल सुनार तक पहुंची।

जेब पर भी निगाह रखनी थी,
देखा, नौबत उधार तक पहुँची।

मेरी आवाज़, मेरी आह 'मयंक',
क्यों न परवरदिगार तक पहुंची।

क़ब्र में जाकर हमें रहमत मिली तो क्या मिली।
बाद मरने के अगर जन्नत मिली तो क्या मिली।।

खाने, पीने, ओढ़ने की ख़्वाहिशें ही मर गईं,
इस बुढ़ापे में हमें दौलत मिली तो क्या मिली।

जीते जी जो एक कच्चा घर नहीं बनवा सका,
संगे-मरमर की उसे तुरबत मिली तो क्या मिली।

जिसके हक़ में हर दुआ साबित हुई हो बेअसर,
ऐसे इक बीमार को हिकमत मिली तो क्या मिली।

जीत कर दुनिया, जो ख़ाली हाथ दुनिया से गया,
उस सिकन्दर की हमें क़िस्मत मिली तो क्या मिली।

मुफ़लिसी, बेग़ैरती, बेचारगी और क़त्ले-आम,
हमको अपने वोटों की क़ीमत मिली तो क्या मिली।

आज ग़द्दारों को रुतबे और ओहदे हैं 'मयंक',
हम वफ़ादारों को बस शोहरत मिली तो क्या मिली।

दुनिया की इक फ़क़ीर ने कुछ यूं मिसाल दी।
मुट्ठी में भर के धूल हवा में उछाल दी।।

बदली से चांद आए नज़र, हमने चाहा था,
तुमने नक़ाब उठा के वो हसरत निकाल दी।

पूछा जो मैंने वक़्त से, क्या होगा मेरा हश्र,
चुटकी में ले के ख़ाक मेरे सर पे डाल दी।

जिसकी कोई मिसाल नहीं है जहान में,
तौबा कि मैंने उसकी ख़ुदा से मिसाल दी।

सन्जीदगी से कैसे सुनूं उसकी कोई बात,
जिसने हर एक बात मेरी हँस के टाल दी।

रुसवा तुम्हीं नहीं हो अकेले समाज में,
दौलत ने अच्छे-अच्छों की पगड़ी उछाल दी।

उस कारीगर के फ़न का है सानी कहाँ 'मयंक',
जिसने हयात ख़ाक के पैकर में ढाल दी।

डराओ मत हवाओं से, करो मत बात आंधी की।
दिया गर ज़िद पे आ जाए तो क्या औक़ात आंधी की।।

चमन में हमने मांगे थे हवा से सिर्फ़ कुछ झोंके,
वो लेकर आई सबके वास्ते सौग़ात आंधी की।

जो आया राह में इसकी, उसे अपना लिया इसने,
न कोई धर्म आंधी का, न कोई ज़ात आंधी की।

हवेली, कोठियां, छप्पर हवा हो जाएंगे सारे,
इसी रस्ते से गुज़रेगी अगर बारात आंधी की।

कहो इससे कि अपना रुख़ बदल कर वापसी कर ले,
भला कब तक उतारें आरती देहात, आंधी की।

परेशानी नहीं है जीत से इसकी हमें बिलकुल,
हमें इसका यक़ीं है, होगी इक दिन मात आंधी की।

'मयंक' इतनी क़यामत तो क़यामत भी न ढाएगी,
क़यामत ढा गई दुनिया में जो बरसात आंधी की।

न वो आदब पीने के, न पीने का चलन साक़ी।
भरी है बेशऊरों से ये तेरी अंजुमन साक़ी।।

हरम और दैर से आकर जो मयख़ाने में बैठा हूँ,
ये मेरी होशमंदी है कि है दीवानापन साक़ी।

अगर मुमकिन हो तो इक जाम दे दे अपनी आंखों का,
मैं हो जाऊँगा ताज़ा दम मिटेगी हर थकन साक़ी।

शराबे-सरफ़रोशी का नशा कुछ और होता है,
जगा देता है दिल में जज़्ब-ए-हुब्बे-वतन साक़ी।

कहां हर रिंद को पीने की तू तालीम देता है,
हर इक मयख़्वार को आता नहीं पीने का फ़न साक़ी।

यहां तफ़रीक़े-ख़ासो-आम की बातें नहीं होतीं,
यहां पीते हैं मिल कर साथ धरती और गगन साक़ी।

यहां मयख़्वार अपने ख़ून से करते हैं आपाशी,
तभी तो फूलता-फलता है अपना ये चमन साक़ी।

इसे दोज़ख़ बना डाला 'मयंक' अह्ले-सियासत ने,
कभी फ़िरदौस के मानिंद था अपना वतन साक़ी।

(उ)

सोचिए मत, क्या करेंगे राहु केतु।
आपसे सौदा करेंगे राहु केतु।।

कोई हिम्मत बांधकर आए अगर,
मौत की इच्छा करेंगे राहु केतु।

ज्योतिषी तो बस यही बतलाएगा,
देखना, धोखा करेंगे राहु केतु।

डर हमारे दिल में होगा जब तलक,
हम स्वयं पैदा करेंगे राहु केतु।

क्यों असर होता नहीं इस शख़्स पर,
देर तक सोचा करेंगे राहु केतु।

जानता हूँ भूल जाएंगे मुझे,
वरना समझौता करेंगे राहु केतु।

दिन इबादत में गुज़ारा है 'मयंक',
अब मुझे सजदा करेंगे राहु केतु।

आदमी किस को कहें, सारे हैं दस्यु।
मौत के, आफ़त के हरकारे हैं दस्यु।।

एक कण इन में न पाओगे मिठास,
क्योंकि सागर से बहुत खारे हैं दस्यु।

बिन छुए पत्थर इन्हें कहते थे लोग,
छू के देखो तो ये अंगारे हैं दस्यु।

इन के आगे हर कोई लाचार है,
कौन कहता है कि बेचारे हैं दस्यु।

आदमी का क़त्ल तो करते ही हैं,
आदमीयत के भी हत्यारे हैं दस्यु।

जब से रक्खा है सियासत में क़दम,
आसमां के चांद हैं, तारे हैं दस्यु।

पड़ गया पाला क़लम से क्या 'मयंक',
बिन हवा के आज गुब्बारे हैं दस्यु।

(ऊ)

नेक बन्दे वो, जो हैं फ़ित्रत से गऊ।
जबकि बाक़ी लोग हैं सूरत से गऊ।।

पालते थे पहले इज़्ज़त से गऊ,
अब तो रखते हैं ज़रूरत से गऊ।

जिनको कुत्ते पालना आसान है,
देखते हैं वो ही नफ़रत से गऊ।

इसका रुतबा है यहां पर माँ के बाद,
पूजी जाती है अक़ीदत से गऊ।

पहले मिल जाती थी बछिया दान में,
इन दिनों मिलती है क़ीमत से गऊ।

दूध मिलने तक ही सेवा होती है,
देखते हैं फिर हिक़ारत से गऊ।

यूं अगर निर्यात होगा तो 'मयंक',
ख़त्म हो जाएगी भारत से गऊ।

दिखाते हो तुम इतना प्यार ताऊ।
मगर ठाने हुए हो रार ताऊ।।

समझते थे सभी मासूम इनको,
अचानक हो गए हुशियार ताऊ।

कभी मन्डी भरी थी ताउओं से,
अभी मिलते नहीं दो-चार ताऊ।

अगर सेना में भर्ती हो रही है,
तो कैसे हो गए बीमार ताऊ।

पता है गांव के मुखिया का क़िस्सा,
कभी पढ़ते भी हो अख़बार ताऊ।

ये शहरी हैं, ये देहाती नहीं हैं,
तू इन चोरों को मत ललकार ताऊ।

सुनाते हो वही क़िस्से पुराने,
सुनेंगे हम ये कितनी बार ताऊ।

अब इन चीज़ों का आख़िर क्या करें हम,
पुरानी बग्घियां, तलवार, ताऊ।

'मयंक' अब शहर में मिलता नहीं है,
अलग था गांव में किरदार ताऊ।

इबादत गाहों से उठती तो है लोबान की ख़ुश्बू।
मगर अफ़सोस मिलती ही नहीं भगवान की ख़ुश्बू।।

ये दुनिया आज तक महफ़ूज़ है तो ऐसा लगता है,
बची है हम में थोड़ी सी अभी ईमान की ख़ुश्बू।

ग़ुलाम इस जुर्म पर अब क़त्ल हो जाएगा मक़तल में,
हरम में उसने कैसे सूंघ ली सुलतान की ख़ुश्बू।

हमें तो हर क़दम पर आज भी इन्सान मिलते हैं,
यहाँ कुत्तों को मिलती ही नहीं इन्सान की ख़ुश्बू।

ये सारे फूल बे ख़ुश्बू हैं, नक़ली हैं, सजावट हैं,
तुम्हें जो आ रही है, वो तो है गुलदान की ख़ुश्बू।

कभी सरहद पे जाकर तुम शहीदों के कफ़न देखो,
तभी समझोगे कैसी होती है बेजान की ख़ुश्बू।

'मयंक' अपने वतन में हर तरफ़ ख़ुश्बू ही बस्ती है,
कहीं गीता की ख़ुश्बू है, कहीं क़ुरआन की ख़ुश्बू।

कोई ऋतु हो, सर्दी कि बारिश कि लू।
नज़र हमको आता है बस एक तू।।

दिलाती है सम्मान, अपमान भी,
अजब चीज़ होती है ये गुफ़्तगू।

तमन्ना यही थी कि तोड़ूं इसे,
मगर फूल कहता है, मुझको न छू।

मुझे उसने देखा मगर चल दिया,
बहे अश्क और धुल गई आरज़ू।

कोई ग़म नहीं है जुदाई में भी,
मैं ख़ुश हूं यही सोचकर, ख़ुश है तू।

यहाँ रोज़ होता है छलनी ये दिल,
करे कोई कब तक रफ़ू पर रफ़ू।

'मयंक' अब सियासत से उम्मीद क्या,
बचाएंगे हम देश की आबरू

(ए)

लोग कहते हैं कि राहत चाहिए।
किसको सूरज की तमाज़त चाहिए।।

इस जगह तो प्यार भी नाकाम है,
इस जगह शायद सियासत चाहिए।

आप इस माहौल को कहते हैं अम्न,
अम्न की भी अब वज़ाहत चाहिए।

साफ़ सब कुछ कह दिया 'रैदास' ने,
इस तरह कहने में हिम्मत चाहिए।

हर कोई मरने से डरता है मगर,
हर कोई कहता है जन्नत चाहिए।

रंग, सूरत और सीरत, छोड़िए,
आज की दुनिया को दौलत चाहिए।

दूसरों ने मांग ली दुनिया 'मयंक',
ऐ ख़ुदा, मुझको तो इज़्ज़त चाहिए।

दोस्तों की दोस्ती का ज़िक्र चलने दीजिए।
आस्तीं में सांप पलते हैं तो पलने दीजिए।।

आप ज़हमत मत उठाएं ख़ुद-ब-ख़ुद बुझ जाएंगे,
चार दिन के हम दिये हैं हम को जलने दीजिए।

आप यूं ही लूटिए फ़स्ले बहारां के मज़े,
हाथ अरबाबे-चमन मलते हैं, मलने दीजिए।

आपके दामन से उलझें, कब गवारा है मुझे,
मुझको इन गुस्ताख़ कांटों को कुचलने दीजिए।

रफ़्ता-रफ़्ता छोड़ देंगे ख़ुद ही वह बैसाखियां,
अपने पैरों पर उन्हें कुछ दूर चलने दीजिए।

रुख़ किए महलों की जानिब एक मुद्दत हो गई,
ज़ाविया सूरज को अपना अब बदलने दीजिए।

आपको तन्हा न छोडूंगा ग़मों की धूप में,
आपका साया हूँ, अपने साथ चलने दीजिए।

कब तलक डाले रहेंगे रुख़ पे ज़ुल्फ़ों की नक़ाब,
बदलियों से चांद को बाहर निकलने दीजिए।

फिर उठाऊंगा क़दम मैं जानिबे-मंज़िल 'मयंक',
ठोकरें खाकर मुझे पहले संभलने दीजिए।

जिसे तेरी निगाहों का मयस्सर जाम हो जाए।
मुझे पूरा यक़ीं है वह 'उमर ख़य्याम' हो जाए।।

हमें मालूम है आंखों में अपनी डाल कर काजल,
जिधर से भी निकल जाएं वो, क़त्ले-आम हो जाए।

तुम्हारे साथ फिर पीने पिलाने का मज़ा लूंगा,
ज़रा यह धूप ढल जाए, सुनहरी शाम हो जाए।

हसीं फूलों के तन वाले, हसीं फूलों के मन वाले,
नज़र जिस पर पड़े तेरी वही बदनाम हो जाए।

मुहब्बत को छुपाना है तो ख़्वाबों में चले आओ,
तुम्हारी बात रह जाए, हमारा काम हो जाए।

यही मेरी तमन्ना है, यही कोशिश है अब मेरी,
मुहब्बत का चलन सारे जहां में आम हो जाए।

'मयंक' इन पर यक़ीं करने से पहले ध्यान यह रखना,
कहीं हावी न तुम पर गर्दिशे-अय्याम ऐयाम हो जाए।

आपकी आमद से सारे मसअले हल हो गए।
आपको देखा तो हम ख़ुशियों से पागल हो गए।।

कल तलक जो आपकी चाहत ने बख़्शे थे मुझे,
वह सभी मंज़र मिरी आंखों से ओझल हो गए।

रूठ कर मैं आपसे चल तो दिया था कल मगर,
दो क़दम भी चल न पाया, पांव बोझल हो गए।

क़त्ल जब भाई को भाई का गवारा हो गया,
घर के आंगन भी हमारे तब से मक़तल हो गए।

तुमसे मिलते ही मुझे एहसास यह होने लगा,
जज़्ब जैसे आज में बीते हुए कल हो गए।

डर गया टूटे हुए छप्पर में बेचारा ग़रीब,
आसमां पर जब कभी घनघोर बादल हो गए।

कैकटस पर फूल आए बाग़ में जब से 'मयंक',
रंग-बिरंगी तितलियों के पंख घायल हो गए।

लब नहीं खुलते ये कहने के लिए।
क्या हमीं है ज़ुल्म सहने के लिए।।

ज़ब्त की हद में ये रह सकते नहीं,
अश्क होते ही हैं बहने के लिए।

एक जुम्ला बदसलूकी का बहुत,
प्यार की दीवार ढहने के लिए।

हम भी इस गुलशन के परवानों में हैं,
दो जगह हमको भी रहने के लिए।

सलतनत सारी सिमट कर रह गई,
हम भी हैं सुलतान, कहने के लिए।

एक पत्थर का कलेजा चाहिए,
हादसाते-ग़म को सहने के लिए।

हर कोई आज़ाद है अब तो 'मयंक',
अपनी-अपनी रौ में बहने के लिए।

छोड़ो, न छेड़ो यार, कहा, मुस्कुरा दिए।
तुम पर ख़ुदा की मार, कहा, मुस्कुरा दिए।।

तीरों का कोई और बदल हो तो बोलिए,
मेरी नज़र के वार, कहा, मुस्कुरा दिए।

सज्दे में सर झुकाएं कहां, यह बताईए,
आशिक़ का हो मज़ार, कहा, मुस्कुरा दिए।

पूछा, मेरे सिवा भी कोई जांनिसार है,
क्या बोलूं, बेशुमार, कहा, मुस्कुरा दिए

मैंने कहा हुज़ूर, ज़रा इक नज़र इधर,
थोड़ा सा इन्तेज़ार, कहा, मुस्करा दिए।

मैंने कहा कि इश्क़ का हासिल बताईए,
ता उम्र बेक़रार, कहा, मुस्कुरा दिए।

मैंने कहा, वफ़ा पे मेरी तब्सिरा करें,
तुम और वफ़ा शिआर, कहा, मुस्कुरा दिए

सोना, सोना है, इसकी अहमियत न पूछी जाए।
इश्क़ करने वालों की हैसियत न पूछी जाए।।

मेहनतो-मशक्क़त से नाम जो कमाते हैं,
ऐसे कर्मवीरों की वल्दियत न पूछी जाए।

मेरे बारे में उनका फ़ैसला यही होगा,
सिर्फ़ ग़म दिए जाएं, कैफ़ियत न पूछी जाए।

क़र्ज़ दूध का क्या है, फ़र्ज़ अपना क्या-क्या है,
बूढ़ी माँ की बेटों से ख़ैरियत न पूछी जाए।

डेढ़ ईंट की मस्जिद, सबके अपने-अपने मठ,
फिर भी लोग कहते हैं, ज़ेह्नियत न पूछी जाए।

अब सुख़न की महफ़िल में चाहता है हर शायर,
दाद तो मिले लेकिन शेरियत न पूछी जाए।

कल 'मयंक' वो तुझको ढूंढ़कर बुलाएंगे,
ऐसा कैसे मुम्किन है शख़्सियत न पूछी जाए।

न जाने कैसे परिंदे उड़ान भूल गए।
ज़मीन याद रही आसमान भूल गए।।

हज़ार बार वो आए ग़रीबख़ाने पर,
मिला जो रूत्बा तो मेरा मकान भूल गए।

है कैसा शह्र का माहौल, हमको क्या मालूम,
तुम्हारी याद में सारा जहान भूल गए।

जो अपने घर में लड़कपन से सुनते आए थे,
बड़े हुए तो वो अपनी ज़बान भूल गए।

हमारी बात उन्हें याद कैसे रह पाती,
वक़ार पा के जो अपना बयान भूल गए।

खड़े हैं खेतों में ऊपर नज़र उठाए हुए,
करम की कब हुई बारिश, किसान भूल गए।

तुम इनकी बातों पे हर्गिज़ यक़ीन मत करना,
ये लोग वह हैं जो देकर ज़बान भूल गए।

हमारे गांवों में ऐसे भी लोग रहते हैं,
मिली हवेली तो कच्चे मकान भूल गए।

वो ठाट-बाट कहां ज़िंदगी में अब ऐ 'मयंक',
तलाशे-रिज़्क़ में सब आन-बान भूल गए।

सभी दावा यही करते हैं, मक्कारी नहीं करते।
तो क्या अपने कभी अपनों से ग़द्दारी नहीं करते।।

हमें सच बोलना आता है, मुंह पर बोलते हैं हम,
कभी नाटक नहीं करते, अदाकारी नहीं करते।

न कोई रास्ता मिलता, न आज़ादी हमें मिलती,
अगर हम लोग ख़ुद थोड़ी सी हुशियारी नहीं करते।

उन्हें टकराओ तो शोले निकल आते हैं पल भर में,
यहाँ ऐसे भी पत्थर हैं जो चिंगारी नहीं करते।

'मयंक' अफ़सोस और एहसास से बाहर निकल आओ,
तबीयत को ज़रा सी बात पर भारी नहीं करते।

ग़मों को भूल जाने का इरादा कर लिया हमने।
हमेशा मुस्कुराने का इरादा कर लिया हमने।।

ज़रूरी है, नदी सागर में जाकर ग़र्क़ हो जाए,
नदी उलटी बहाने का इरादा कर लिया हमने।

अड़े ज़िद पर तो मुफ़लिस करके छोड़ेंगे अमीरों को,
अगर पैसे कमाने का इरादा कर लिया हमने।

सभी नाराज़ थे इस पर कि हम उनसे नहीं डरते,
सभी से ख़ौफ़ खाने का इरादा कर लिया हमने।

धुलेंगे पाप, कितना सच है, कितना झूठ है, फिर भी,
चलो गंगा नहाने का इरादा कर लिया हमने।

हुकूमत जानता हूँ, जान ले लेती है बाग़ी की,
मगर परचम उठाने का इरादा कर लिया हमने।

'मयंक' इस बात पर अपने सभी नाराज़ हैं हमसे,
लुटी बस्ती बसाने का इरादा कर लिया हमने।

सूरमा डरते हैं कब ललकार से।
लड़ गए टूटी हुई तलवार से।।

पहले सेवक थे हमारे देश में,
अब के नेता हो गए अवतार से।

क़िस्त पर सब कुछ मुहैया है यहां,
एक दिन मज़दूर उतरा कार से।

भीड़ क्या समझेगी, क्या समझेंगे आप,
पहले बातें कीजिए दो-चार से।

मुझको दौलत मिल गई तो सब मिले,
आज दुश्मन भी मिला है प्यार से।

ऐसा लगता है कि ठहरेंगे नहीं,
जा रहे हैं लोग किस रफ़्तार से।

मौत शायद मिल भी जाएगी 'मयंक',
ज़िन्दगी आती नहीं बाज़ार से।

जो बाहर न निकलेंगे, घर में रहेंगे।
हवाओं के वो भी असर में रहेंगे।।

लुटेंगे सरे-राह हम कितने दिन तक,
क़दम अपने कब तक सफ़र में रहेंगे।

फ़लक पर अभी जगमगाएगा सूरज,
सितारे भला क्या सहर में रहेंगे।

है सारा जहां जिनका, उनको ये ज़िद है,
हमेशा किराये के घर में रहेंगे।

भला कैसे फिर उनकी पहचान होगी,
जो वो भी लिबासे-बशर में रहेंगे।

जिन्होंने अदब को नई ज़िंदगी दी,
वो अह्ले-अदब की नज़र में रहेंगे।

'मयंक' अपना अन्दाज़ क़ायम रहेगा।
ख़बर में रहे हैं, ख़बर में रहेंगे।

चाहत के तराज़ू पर हर लफ़्ज़ को तौलेंगे।
अशआर की सूरत में फिर आप से बोलेंगे।।

दुनिया पे मुहब्बत का हम राज़ न खोलेंगे,
तन्हाई में हंस लेंगे, तन्हाई में रो लेंगे।

हम सुख के नहीं तेरे, दुख-दर्द के साथी हैं,
अश्कों को तिरे अपने दामन में समो लेंगे।

मज़दूर हैं हम, हमको जब नींद सताएगी,
अख़बार बिछा लेंगे, फुटपाथ पे सो लेंगे।

सूली पे चढ़ा दो तुम या ज़हर का प्याला दो।
जो सच के पुजारी हैं, वो झूठ न बोलेंगे।

जब हाथ धुलाने थे, तब पानी की थी क़िल्लत,
क़ातिल ने कहा छोड़ो, हम ख़ून से धो लेंगे।

जो सच्चे मुसाफ़िर हैं, ख़तरों से नहीं डरते,
तलवों में 'मयंक' अपने वह ख़ार चुभो लेंगे।

मिटेंगे फ़ासले कब दरमियां से।
ये धरती पूछती है आसमां से।।

हमारा इम्तिहां लेकर तो देखें,
डराते हैं जो हमको इम्तिहां से।

तुम्हीं यह फ़ैसला करके बता दो।
सुनाएं दास्तां तुमको कहां से।

किसी ने कान उनके भर दिए हैं,
नज़र आते हैं वह भी बदगुमां से।

वही मुजरिम है जो है आज मुंसिफ़,
ये बिलकुल साफ़ है मेरे बयां से।

समर वाले शजर घर में नहीं हैं,
तो पत्थर सहन में आए कहां से।

'मयंक' उनको ज़माना जानता है,
वो क्या हैं, क्यों कहूं अपनी ज़ुबां से।

हम जो गुल फ़रोशों को तख़्त पर बिठा देंगे।
यह चमन की अज़्मत को ख़ाक में मिला देंगे।।

आंधियों के झोंकों को रोशनी से ज़िद सी है,
हम दिए जलाएंगे और वह बुझा देंगे।

मत करो उजालों की इनसे कोई फ़रमाइश,
रोशनी जो मांगोगे, बस्तियां जला देंगे।

उस तरफ़ के झोंके गर आ गए गुलिस्तां में,
नफ़रतों के शोलों को और भी हवा देंगे।

क्या कहें अभी से हम आसमां नशीनों से,
क्या हमारे दिल में है, एक दिन बता देंगे।

धो रहे हैं हाथ अपने वह भी बहती गंगा में।
दूध की जो कहते थे नद्दियां बहा देंगे।

जो 'मयंक' रहते हैं आठ-दस क़दम आगे,
हमको आगे जाने को कैसे रास्ता देंगे।

मेरे आंसू गरचे मेरी दास्तां कहते रहे।
कहने वाले फिर भी मुझको बेज़बां कहते रहे।।

और कुछ कहने की फ़ुर्सत ज़िंदगी ने दी कहां,
उम्र भर हम अपने ग़म की दास्तां कहते रहे।

कर दिया बर्बाद जिसकी मेहरबानी ने हमें,
हम उसी नामेहरबां को मेहरबां कहते रहे।

जिनके दम से थी बहुत महफ़ूज शाखे़-आशियां,
हम उन्हीं तिन्कों को अपना आशियां कहते रहे।

जिसने खुद लूटा सरे-मंज़िल हमारा कारवां,
हम उसी को अपना मीरे-कारवां कहते रहे।

जिसकी मिट्टी ने हमारे जिस्म को बख़्शी जिला,
उम्र भर हम उस ज़मीं को आसमां कहते रहे।

ख़ाना-ए-दिल में हमारे जो मकीं है ऐ 'मयंक',
तौबा-तौबा हम उसी को लामकां कहते रहे।

लाख झेली है मुफ़लिसी हमने।
फिर भी छोड़ी नहीं ख़ुदी हमने।।

अपना अन्जाम मौत होना था,
ज़िन्दगी ज़ह्‌र सी थी, जी हमने।

ये बनावट पसन्द दुनिया है,
फिर भी छोड़ी न सादगी हमने।

बात औरों की अनसुनी कर दी,
सिर्फ़ इस दिल की ही सुनी हमने।

ख़ुद अंधेरों में हम रहे लेकिन,
दी है दुनिया को रोशनी हमने।

इश्क़ करना अगर ख़ता है तो,
यह ख़ता की है वाक़ई हमने।

है अदब शर्त, कैसे कह दें 'मयंक',
तुम सा देखा न आदमी हमने।

(ऐ)

मेरी कहानी तेरी दास्तां से मिलती है।
कहीं तो जा के ज़मीं आसमां से मिलती है।।

है ज़िक्र जिसका किताबों में, दीन की मेराज,
मेरी जबीं को तेरे आस्तां से मिलती है।

ये मेरा अज़्मे-जवां ही तो है कि हर मंज़िल,
जो आ के ख़ुद ही मेरे कारवां से मिलती है।

ये जानते हैं कि है हातिमों का हातिम कौन,
हमें पता है कि दौलत कहां से मिलती है।

किसी भी और ज़बां में है वह मिठास कहां,
जो चाशनी हमें उर्दू ज़बां से मिलती है।

ख़मोश समुंदर, ठहरी हवा, तूफ़ां की निशानी होती है।
डर और ज़ियादा लगता है, जब नाव पुरानी होती है।।

इक ऐसा वक़्त भी आता है, आंखों में उजाले चुभते हैं,
हो रात मिलन की अंधियारी तो और सुहानी होती है।

अनमोल बुज़ुर्गों की बातें, अनमोल बुज़ुर्गों का साया,
उस चीज़ की क़ीमत मत पूछो जो चीज़ पुरानी होती है।

वैसे तो मुझे ऐ शेख़े-हरम, पीने का नहीं है शौक़ मगर,
इक साग़रे-मय पी लेता हूँ, जब दिल पे गरानी होती है।

इस क़ह्‌रे इलाही का यारो, लफ़्ज़ों में बयां है नामुम्किन,
जब बाप के कांधे को मय्यत बेटे की उठानी होती है।

जो औरों के काम आते हैं, मर कर भी अमर हो जाते हैं,
दुनिया वालों के होठों पर, उनकी ही कहानी होती है।

हो जाएगी ठंडी रोने से, यह आग तुम्हारे दिल की 'मयंक',
होती है नवाज़िश अश्कों की तो आग भी पानी होती है।

मोम के पैकरे-नाज़ुक में भी ढल सकता है।
आह में दम हो तो पत्थर भी पिघल सकता है।।

मौत का वक़्त मुक़र्रर है ये माना लेकिन,
तुम जो आ जाओ तो यह वक़्त भी टल सकता है।

सच को क्या झूठ के अजगर ये मिटा पाएंगे,
क्या अंधेरा कभी सूरज को निगल सकता है।

ख़ुद न बदला जो बदलते हुए हालात के साथ,
उसकी फ़ित्रत को भला कौन बदल सकता है।

हों जहाँ जिन्से-सियासत की दुकानें हर सू,
खोटा सिक्का उसी बाज़ार में चल सकता है।

शह्‌रे-ख़ूबां में इसे साथ न लेकर चलिए,
दिल तो नादां है जहां चाहे मचल सकता है।

जो चुभोया है रक़ीबों ने मेरे दिल में 'मयंक',
वह जो चाहें तो ये कांटा भी निकल सकता है।

(ओ)

जहां मेराजे-ग़म हासिल नहीं है।
वो मेरे प्यार की मंज़िल नहीं है।।

तबाही पर मेरी ऐ हंसने वाले,
तेरे पहलू में शायद दिल नहीं है।

निगाहें मेरी अपने हाल पर हैं,
नज़र में मेरी मुस्तक़बिल नहीं है।

हमें ख़ुद है जुनूने-सरफ़रोशी,
कमाले-बाज़ुए-क़ातिल नहीं हैं।

वफ़ाओं का सिला क्यों मांगते हो,
वफ़ाओं का कोई हासिल नहीं है।

ज़माने की रविश पर चल के देखो,
यहां जीना कोई मुश्किल नहीं है।

हैं नाज़ाँ हम उसी की दोस्ती पर,
हमारे ग़म में जो शामिल नहीं है।

'मयंक' अब दिल लगाएं भी तो किससे,
कोई भी प्यार के क़ाबिल नहीं है।

ज़ेरे-लब जब भी जाम होता है।
ज़िक्रे-तौबा हराम होता है।।

रश्क करती है उस पे यह दुनिया,
जिसका दुनिया में नाम होता है।

मौत की सिर्फ़ एक हिचकी से,
सारा क़िस्सा तमाम होता है।

उसको मिलती नहीं कभी मंज़िल,
हौसला जिसका ख़ाम होता है।

जान दे दे जो दूसरों के लिए,
किससे यह नेक काम होता है।

एहतरामन नज़र नहीं उठती,
उनसे फिर भी सलाम होता है।

देखने वाला चाहिए ऐ 'मयंक',
उसका जलवा तो आम होता है।

अब दिमाग़ आसमानों में है।
पांव लेकिन ढलानों में है।।

दौलते-मुल्क, मत पूछिए,
सिर्फ़ कुछ ख़ानदानों में हैं।

हर घड़ी इक न इक मसअला,
ज़िंदगी इम्तहानों में है।

पंख भी जिसके अपने नहीं,
वह भी ऊंची उड़ानों में है।

जिनके दम से अंधेरे बढ़े,
रोशनी उन मकानों में है।

फीका पकवान भी आजकल,
ऊंची-ऊंची दुकानों में है।।

सांस लेना भी मुश्किल है अब,
वह घुटन आशियानों में है।

होशमंदों की सफ़ में था जो,
वह भी शामिल दिवानों में है।

ढूंढ़ते हो जिसे तुम 'मयंक',
वह हक़ीकत फ़सानों में है।

रंजो-ग़म हमारे हैं और ख़ुशी तुम्हारी है।
हम तो यूं ही जीते हैं, ज़िंदगी तुम्हारी है।।

दोस्ती ग़ज़ब की थी पहले दैरो-काबा में,
वह सदी हमारी थी, यह सदी तुम्हारी है।

कौन काम आया है, कौन काम आएगा,
हर किसी से दुनिया में दुश्मनी तुम्हारी है।

किस क़दर निराला है खेल यह मुहब्बत का,
चित्त भी तुम्हारी है, पट्ट भी तुम्हारी है।

अपनी ज़िंदगी पर भी कुछ नहीं है हक़ अपना,
कल भी यह तुम्हारी थी, आज भी तुम्हारी है।

तुमसे ही मुनव्वर है इस जहां का हर ज़र्रा,
चांद और सूरज में रोशनी तुम्हारी है।

आशिक़ी के बारे में तजुर्बा है क्या तुमको,
मौज और मस्ती की उम्र अभी तुम्हारी है।

लाख रंग भरता हूँ, रंग पर नहीं आती,
इसलिए कि महफ़िल में इक कमी तुम्हारी है।

शोहरतों की मंज़िल पर पहुंचोगे 'मयंक' इक दिन,
फ़िक्रो-फ़न से वाबस्ता शायरी तुम्हारी है।।

ग़म में डूबी हुई फ़ज़ा क्यों है।
चेहरा-चेहरा बुझा बुझा क्यों है।।

दिन क़यामत के दूर हैं, फिर भी
सबके लब पर ख़ुदा-ख़ुदा क्यों है।

सामने रख के आईना कोई।
ऐब औरों के देखता क्यों है।

प्यार में दो क़दम चलें कैसे,
इतना मुश्किल ये रास्ता क्यों हैं।

जिसकी आदत में है ख़फ़ा रहना,
उससे मत पूछिए, ख़फ़ा क्यों है।

सारी चीज़ें ही मिट गई हैं जब,
यह मुहब्बत का सिलसिला क्यों है।

आज को रख नज़र में अपनी 'मयंक',
कल के बारे में सोचता क्यों है।

अपने पहलू में जगह उसको ख़ुदा देता है।
नेकियां करके जो इंसान भुला देता है।।

अपने साए में पनपने नहीं देता कमबख़्त,
नन्हें पौधों को बड़ा पेड़ दबा देता है।

एक मरक़ज़ पे किसी को नहीं रहने देता,
वक़्त इंसान की औक़ात बता देता है।

छीन लेता है कभी मुंह का निवाला अल्लाह,
और कभी देता है तो हद से सिवा देता है।

पहले आंखों पे बिठाता है बड़े प्यार के साथ,
फिर वही शख़्स निगाहों से गिरा देता है।

यूं तो देता है हर इक शख़्स वफ़ाओं का सिला,
बद्दुआ कोई मुझे, कोई दुआ देता है।

अपने मुंसिफ़ का भी है सबसे निराला अंदाज,
जुर्म किसका है मगर किसको सज़ा देता है।

नाम लेता ही नहीं चैन से जीने वाला,
तुमको हर शख़्स मुसीबत में सदा देता है।

एक हम हैं कि जो अश्कों से बुझाते हैं 'मयंक',
एक वह है कि जो शोलों को हवा देता है।

मेरे आंसू अपनी पलकों पर सजाता कौन है।
दूसरों के वास्ते ज़हमत उठाता कौन है।।

एक कठपुतली की सूरत हैं तमाशागाह में,
नाचते हैं हम मगर हमको नचाता कौन है।

किसके लब पर गुलसितां में है तबस्सुम की लकीर,
सिर्फ़ गुंचों के सिवा अब मुस्कुराता कौन है।

जिसके दिल में दर्द है उसको सुनाने आए हैं,
दास्तां बेदर्द दुनिया को सुनाता कौन है।

यूं तो जांबाज़ों की मक़तल में है इक लंबी क़तार,
देखना है सबसे पहले सर कटाता कौन है।

वह अगर रूठे हैं तो रूठे रहें अपनी जगह,
बिन बुलाए अंजुमन में उनकी, जाता कौन है।

चाहे तुम हो, या कि हम, या और कोई हो 'मयंक',
बेग़रज़ क़दमों पे उसके सिर झुकाता कौन है।

अलग रहना उसे मंज़ूर क्यों है।
हक़ीक़त मुझसे कोसों दूर क्यों है।।

ये मुख़्तारे जहां से कोई पूछे,
कि इंसां इस क़दर मजबूर क्यों है।

हज़ारों इन्क़लाब आए हैं लेकिन,
मुहब्बत का वही दस्तूर क्यों है।

जवानी चांदनी है चार दिन की,
वो अपने हुस्न पर मग़रूर क्यों है।

उतर जाएगा इक झटके में नश्शा,
वो दौलत के नशे में चूर क्यों है।

वहां हर रुख़ पे ताबानी है लेकिन,
हर इक चेहरा यहां बेनूर क्यों है।

'मयंक' इतना मसीहाओं से पूछो,
हर इक ज़ख़्मे-जिगर नासूर क्यों है।

तेरी बस्ती में लगता मन नहीं है।
यहां लोगों में अपनापन नहीं है।।

किधर से आ रहे हैं घर में पत्थर,
पड़ोसी से मेरी अनबन नहीं है।

खिलौने तब कहां थे खेलने को,
खिलौने हैं तो अब बचपन नहीं है।

लगाएं हम कहाँ तुलसी का पौधा,
हमारे घर में अब आंगन नहीं है।

धड़कने को ये अब भी हैं धड़कते,
दिलों में प्यार की धड़कन नहीं है।

करो मत अपने जिस्मों की नुमाइश,
ये भारत है, कोई लन्दन नहीं है।

'मयंक' आसान जीवन जी रहा हूँ,
तिजोरी में क़लम है, धन नहीं है।

नक़ाबे-रुख उठाकर जब कोई पहलू बदलता है।
तो यूं लगता है जैसे सुब्हे-दम सूरज निकलता है।।

पहुंच जाता है हंसता-खेलता वह अपनी मंज़िल पर,
जो राहे-ज़ीस्त में लेकर ख़ुदा का नाम चलता है।

तुम्हीं बतलाओ आख़िर झूमकर बादल किधर बरसे,
कभी यह गांव जलता है, कभी वह गांव जलता है।

बसेरा जिस पे लेते हों परिंदे आ के रातों में,
शजर वह ही चमन में फूलता है और फलता है।

लगाए चेहरे पर चेहरा कोई बज़्मे-सियासत में,
भला चेहरा लगाने से किसी का दिल बदलता है।

ये कैसा शौक़ है अह्ले चमन का ऐ निगहबानो,
कोई कलियां मसलता है, कोई गुंचा मसलता है।

खिलौने दे के वादों के न मेरे दिल को बहलाओ,
कहीं ऐसे खिलौनों से किसी का दिल बहलता है।

'मयंक' अब तुम बदलते वक़्त में ख़ुद को बदल डालो,
बहारों के दिनों में हर शजर कपड़े बदलता है।

तुमको ख़ुशी पसंद, हमें ग़म पसंद है।
तुम ही बताओ हौसला किसका बुलंद है।।

होगी नसीब उसको ही मेराजे–आशिक़ी,
हाथों में जिसके प्यार की ऊंची कमंद है।

मुझको किसी के दर्द का एहसास क्यों न हो,
सीने में मेरे भी तो दिले–दर्दमंद है।

अच्छे–बुरे को ख़ैर से पहचानता है वो,
पागल है वो ज़रूर मगर होशमंद है।

लाऊं कहां से दिल के लिए दिलनशीं 'मयंक',
शह्रे–वफ़ा में प्यार का बाज़ार बंद है।

सभी को इस पे हैरानी बहुत है।
समझदारों में नादानी बहुत है।।

ख़ुदा देखे हमारी बेक़रारी,
ज़मीं पर अब परेशानी बहुत है।

सुना है इन दिनों वो रो रहे हैं,
गुनाहों पर पशेमानी बहुत है।

बहुत मुश्किल है जीना चार दिन का,
यहां दो दिन की मेहमानी बहुत है।

जियो तो सांस लेना भी है दूभर,
मगर मरने में आसानी बहुत है।

सभी कहते हैं खेती बेच डालो,
कभी सूखा, कभी पानी, बहुत है।

'मयंक' अब अजनबी लगती है हमको,
जो सूरत जानी पहचानी बहुत है।

जो कश्ती तेरी रहमत के सहारे छोड़ देता है।
उसे तूफ़ान ख़ुद ला कर किनारे छोड़ देता है।।

सहर होते ही वो आज़ाद कर देता है सूरज को,
ढले दिन तो गगन पर चांद-तारे छोड़ देता है।

समन्दर कश्तियों को बख़्श देता है कोई साहिल,
हम इन्सानों की ख़ातिर तेज़ धारे छोड़ देता है।

ख़ुदा करता है मालामाल कुछ लोगों को रहमत से,
किसी को बेसहारों के सहारे छोड़ देता है।

मैं अपने ज़हन को परवाज़ भी देता हूँ यूं, जैसे,
कोई बच्चा हवाओं में ग़ुबारे छोड़ देता है।

यही बादल बरसता है तो हम ख़ुश होते हैं लेकिन,
यही बादल तबाही के नज़ारे छोड़ देता है।

'मयंक' उसको मसीहा हम कहें भी तो कहें कैसे,
जो ला-ला कर बलाएं घर हमारे छोड़ देता है।

वही हालत है अब उसकी भी, जो हालत हमारी है।
ज़माना हमको क्या देगा, ज़माना ख़ुद भिखारी है।।

हमारे गांव में इन्सानियत है, दोस्तदारी है,
तुम्हारे शहर में हर शख़्स दौलत का पुजारी है।

हमें मालूम है पत्थर कभी पूजे नहीं जाते,
मगर फिर भी तुम्हारी आरती हमने उतारी।

ज़माने भर के ग़म अकसर चले आते हैं घर मेरे,
न इनसे दोस्ती अपनी, न इनसे रिश्तेदारी है।

मुनासिब है करो अपनी हिफ़ाज़त शौक़ से लेकिन,
हमें महफ़ूज़ रखना भी तुम्हारी ज़िम्मेदारी है।

सवारी और सवार आनन्द दोनों ही उठाते हैं,
पिता की पीठ पर बच्चा अगर करता सवारी है।

वसीयत पर 'मयंक' अफ़सोस कैसा, मैं बहुत ख़ुश हूं,
मेरे हिस्से में गर मां-बाप की तीमारदारी है।

बहारों का तो ये मौसम नहीं है।
मगर ख़ुश्बू गुलों में कम नहीं है।।

जहां में आज किसको ग़म नहीं है,
किसी की आंख फिर भी नम नहीं है।

हवाओं ने भी आख़िर थक के माना,
दिए की रोशनी मद्धम नहीं है।

बग़ावत है, इसे सुन लो, समझ लो,
ये कोई प्यार की सरगम नहीं है।

चलो पहले अमल कर के दिखाओ,
नसीहत में तुम्हारी दम नहीं है।

अगर लटका तो फैलेगी बग़ावत,
हमारा सर कोई परचम नहीं है।

'मयंक' इस धूम में सूखेगा कैसे,
पसीना है मिरा, शबनम नहीं है।

तबाही की निशानी हर तरफ़ है।
यहां पानी ही पानी हर तरफ़ है।।

दबा देते हैं हम सच्चे फ़साने,
इधर क़िस्सा-कहानी, हर तरफ़ है।

कभी मेरी निगाहों से भी देखो,
ख़ुदा की मेहरबानी हर तरफ़ है।

बदलती ही नहीं दुनिया की हालत,
वही सूरत पुरानी हर तरफ़ है।

कई सुलतान हैं अपने वतन में,
यहां तो राजधानी हर तरफ़ है।

उड़ा देती है पल भर में सभी को,
हवा की हुकमरानी हर तरफ़ है।

'मयंक' इन्सान पहले मेहनती था,
मगर अब आनाकानी हर तरफ़ है।

किसी के ग़म से शराबोर ज़िन्दगानी है।
मिरे ख़ुदा की यही मुझ पे मेहरबानी है।।

ये साज़िशें हैं, सियासत की मेहरबानी है,
कि हम से दूर, बहुत दूर, राजधानी है।

फ़ज़ा भी अम्नो-अमां की हमें बनानी है,
भड़कती आग दिलों से अगर बुझानी है।

मैं इसको छोड़के हर्गिज़ कहीं न जाऊंगा,
हवेली गरचे पुरानी है, ख़ानदानी है।

वतन के हाल पे हम तुम उदास हैं, तो क्या,
वो जिसको शर्म नहीं, वह भी पानी-पानी है।

मैं एतबार करूं भी तो किस तरह से करूं,
हक़ीक़तों से जुदा आपकी कहानी है।

अमीर अह्ले-सियासत से दूरियाँ रखना,
'मयंक' आपको इज़्ज़त अगर बचानी है।

उधर फिसलन तो है लेकिन फिसलने कौन देता है।
भरी बरसात में घर से निकलने कौन देता है।।

खिलौने आज भी दीवाना करते हैं मुझे लेकिन,
खिलौनों के लिए मुझको मचलने कौन देता है।

समुन्दर, भीड़, रौनक़, रौशनी, बाज़ार, आराइश,
थके-हारे हुए सूरज को ढलने कौन देता है।

वो दौलत हो कि इज़्ज़त हो, वो शोहरत हो कि औरत हो,
हवस की क़ैद से हमको निकलने कौन देता है।

ये हम पर फ़र्ज़ है हम ख़ुश रहें और तालियाँ पीटें,
हमें अफ़सोस में हाथों को मलने कौन देता है।

'मयंक' अपने वतन, प्यारे वतन का बदनुमा चेहरा,
बदलना चाहता तो हूँ, बदलने कौन देता है।

लोग अनोखा बतलाएं, कुछ ऐसा करना है।
काग़ज़ की कश्ती से दरिया पार उतरना है।।

लालच से इन्सान मवेशी बन बैठा, देखो,
वरना क्या इन्सां की फ़ित्‌रत चारा चरना है।

अपनी और अपनों की ख़िदमत ही करते हैं सब,
किसको अब औरों की ख़ातिर जीना-मरना है।

श्याम के दर्शन पाने हैं तो ब्रज की पनिहारिन,
पनघट से जाकर ही तुझको गगरी भरना है।

खिलती हुई कली को कोई कैसे समझाए,
कलियों की क़िस्मत में खिलकर सिर्फ़ बिखरना है।

देश को मेरी आंख से देखो, सब कुछ है इसमें,
हरियाली है, नदिया है, पर्वत है, झरना है।

ऐ 'मयंक' इस चौराहे पर फैली है नफ़रत,
तुमको इस चौराहे से हर रोज़ गुज़रना है।

किताबों में पढ़ा है वाक़्या ऐसा भी होता है।
अजल ने दी हो जीने की दुआ, ऐसा भी होता है।।

लहू का दान करने से बुरे दिन दूर होते हैं,
ग़रीबों से किसी ने कह दिया, ऐसा भी होता है।

क़सीदे कौन लिखता है, किसी की बेवफ़ाई के,
मुहब्बत में मगर ऐ बेवफ़ा, ऐसा भी होता है।

कोई हिकमत न काम आए तो हाथ ऊपर उठा दीजे,
दवा का काम करती है दुआ, ऐसा भी होता है।

क़फ़स की ज़िन्दगी गर रास आ जाए परिन्दे को,
रिहाई लगती है उसको सज़ा, ऐसा भी होता है।

नहाए जब कोई मज़दूर मेहनत के पसीने से,
लगे लू भी उसे बादे-सबा, ऐसा भी होता है।

झपकती ही नहीं पलकें किसी की भूख़ के मारे,
हमारे घर में अकसर रतजगा ऐसा भी होता है।

सज़ाए-मौत मिलती है सदाक़त के फ़रिश्तों को,
अदालत में तिरी क्या फ़ैसला ऐसा भी होता है।

अक़ीदत की नज़र से जब किसी पत्थर को देखोगे,
लगेगा फिर 'मयंक' ऐसा, ख़ुदा ऐसा भी होता है।

(ओ)

कोई भूला बिसरा सा वाक़या न बतलाओ।
चोट दिल पे लगती है, हादसा न बतलाओ।।

कल तलक अमीरी पर तंज़ करता था जो शख़्स,
वह मेरी ग़रीबी पर क्यों हंसा, न बतलाओ।

मेरे जैसे दुनिया में लाखों लोग मिलते हैं,
आदमी हूँ अदना सा, देवता न बतलाओ।

जान से भी प्यारे हो, तुमको चाहते हैं हम,
तुम तो मेरे रिश्ते को दूर का न बतलाओ।

ज़िन्दगी गुज़ारी है मन्ज़िलों के साए में,
मुझको मेरी मन्ज़िल का रास्ता न बतलाओ।

तुम तो ले के आए हो, दोस्तों का सन्देसा,
जो कहा है बतलाओ, अनकहा न बतलाओ।

जो गुज़ारी थी मैंने, वह 'मयंक' लिख डाली,
मेरी आपबीती को फ़लसफ़ा न बतलाओ।

बेबसी को हुकमरानी मत लिखो।
बर्फ़ के टुकड़े को पानी मत लिखो।

आग हो तो आग लिखना ठीक है,
अब जवानी को जवानी मत लिखो।

सिर्फ़ हां या ना ही कहना है तुम्हें,
दोस्तो, क़िस्सा-कहानी मत लिखो।

पहले पैदावार तो दिखलाओ तुम,
काग़जी खेती-किसानी मत लिखो।

जो भी कहना है वो कह दो साफ़-साफ़,
सारे लफ़्ज़ों के मआनी मत लिखो।

लोग चकरा जाएंगे, जाएंगे कहां,
हर नगर को राजधानी मत लिखो।

तुमको आज़ादी है लिखने की 'मयंक',
शर्त है, बस, लनतरानी मत लिखो।

हमने ज़िंदादिली दिखाई तो।
बात इंसाफ़ की उठाई तो।।

मुद्दतों बाद ही सही लेकिन,
याद उनको हमारी आई तो।

आप जिसकी वफ़ा पे नाज़ां हैं,
की उसी ने ही बेवफ़ाई तो।

हश्र के रोज़ जुर्मे-उल्फ़त की,
उसने मांगी अगर सफ़ाई तो।

आप जीते, बजा सही लेकिन,
तीरगी रोशनी में आई तो।

ये भी तौहीने-मयकदा होगी,
प्यास अश्कों से गर बुझाई तो।

तौबा पीने से कर तो लूं लेकिन,
रास आई न पारसाई तो।

कह के दीवाना अपनी महफ़िल में,
उसने मेरी हंसी उड़ाई तो।

तुम जला तो रहे हो शम्अ 'मयंक',
आंधियों को न रास आई तो।

दर से जब उठ्ठे तो मोहरे-आस्ताँ कोई न हो।
वह जबीं क्या जिसपे सज्दों का निशाँ कोई न हो।।

इल्तिजा इतनी है तुझसे ऐ मिरे परवरदिगार,
गुफ़्तगू तुझसे करूँ तो दरम्याँ, कोई न हो।

ज़िंदगी की लिख रहा हूँ आज इक ऐसी किताब,
जिसमें सब कुछ सच ही सच हो, दास्ताँ कोई न हो।

बंदगी को मेरी वह अंदाज़ दे मेरे ख़ुदा,
तुझको जब सज्दा करूँ तो रायगाँ कोई न हो।

ज़िंदगी में जितना चाहे आज़मा ले तू मगर,
बाद मरने के हमारा इम्तेहाँ कोई न हो।

मुझको रहने के लिए ऐसी ज़मीं दे ऐ ख़ुदा,
बिजलियां बिल्कुल न हों और आसमाँ कोई न हो।

अब 'मयंक' इक ऐसी मंज़िल ढूंढ़ता हूँ, जिस जगह,
मेहरबाँ कोई न हो, नामेहरबाँ कोई न हो।

चलो मिलकर अंधेरों को मिटाएं तो उजाला हो।
कोई दीपक मोहब्बत का जलाएं तो उजाला हो।।

उदासी का अंधेरा हर तरफ़ फैला है महफ़िल में,
वो आ कर अंजुमन में मुस्कुराएं तो उजाला हो।

जिन्होंने चाँद सा चेहरा छुपा रक्खा है घूंघट में,
वो घूंघट अपने चेहरे से हटाएं तो उजाला हो।

अभी तो ज़ेहनो-दिल पर बद्‌गुमानी की सियाही है,
यक़ीं वो अपनी चाहत का दिलाएं तो उजाला हो।

ये कैसी शर्त रख दी है चमन के बाग़बानों ने,
कि हम ख़ुद आशियां अपना जलाएं तो उजाला हो।

चराग़ों की हर इक लौ आज तूफ़ानों की ज़द में है,
हिफ़ाज़त ख़ुद करें इनकी हवाएँ तो उजाला हो।

'मयंक' इतना अंधेरा है हताशा और निराशा का,
कोई सूरज उमीदों का उगाएं तो उजाला हो।

(औ)

तेज़ जब होगी दोस्ती की लौ।
तब मिटेगी ये दुश्मनी की लौ।।

आदमीयत अगर नहीं होगी,
फिर कहां होगी आदमी की लौ।

अब इन आंखों को कुछ नहीं दिखता,
मैंने देखी है मुफ़लिसी की लौ।

इसका जलना तो भक्ति है मेरी,
यह दिया भी है आप ही की लौ।

आपका दुख दिखाई देता है,
धुंधली-धुंधली है ज़िन्दगी की लौ।

अपना हंसना, बुझा हुआ दीपक,
और उनकी हंसी, हंसी की लौ।

मैं अंधेरों में खो गया हूँ 'मयंक',
मुझको मिलती नहीं ख़ुशी की लौ।

महीना तीस दिन, त्योहार सौ-सौ।
अकेली जान पर हथियार सौ-सौ।।

ख़रीदें या कि ख़ुद को बेच डालें,
बसे हैं शह्र में बाज़ार सौ-सौ।

किसी को बोलने की भी मनाही,
किसी को मिल गए अधिकार सौ-सौ।

ज़मीं पर पाप अब तक हो रहे हैं,
अगर्चे आ गए अवतार सौ-सौ।

पिता की मौत ने यह भेद खोला,
मक़ां छोटा सा, हिस्सेदार सौ-सौ।

पढ़ें वो जिनको है दिन भर की फ़ुर्सत,
पढ़ूं मैं किस तरह अख़बार सौ-सौ।

'मयंक' इक रोज़ मिट जाएंगे सारे,
क़बीला एक है, सरदार सौ-सौ।

(ङ)

क़र्ज़ क्या है, भीख़ भी इसको गवारा है मियां।
ख़्वाहिशों ने इस क़दर इन्सां को मारा है मियां।।

दोस्त कह कर जिसने भी हमको पुकारा है मियां,
बस उसी ने पीठ में ख़न्जर उतारा है मियां।

वह वतन पर मिट गए और यह मिटा देंगे वतन।
जानते हो किस तरफ़ मेरा इशारा है मियां।

दूर तक पानी ही पानी है मगर प्यासे हैं लोग,
ज़िंदगी खारे समुंदर का नज़ारा है मियां।

वह फ़क़त दो गज़ ज़मीं में क़ैद होकर रह गया,
जो ये कहता था कि ये सब कुछ हमारा है मियां।

जो मनाए खुल के ख़ुशियाँ दुश्मनों की जीत पर,
वह हमारा हो के भी दुश्मन हमारा है मियां।

दूर कितनी भी हो मंज़िल तुमको जाना है 'मयंक',
फिर किसी ने प्यार से तुमको पुकारा है मियां।।

बावफ़ा सिर्फ़ दो-चार हैं।
वरना मतलब के सब यार हैं।।

वह फ़रिश्ते हों या आदमी,
आपके सब तलबगार हैं।

इब्ने-आदम हैं इस वास्ते,
फ़ित्रतन हम गुनहगार हैं।

शहरे-ख़ूबां के बाज़ार में,
हम तो बिकने को तैयार हैं।

उन पे पत्थर चलाते हैं लोग,
क़ैस के जो परस्तार हैं।

बख़्श दें या सज़ा दें हमें,
आप मुंसिफ़ हैं, मुख़्तार हैं।

भूख़ से लड़खड़ाते हैं हम,
लोग कहते है, मयख़्वार हैं।

यह जहां एक स्टेज हैं,
और हम सब अदाकार हैं।

ज़िंदगी के चमन में 'मयंक',
हर तरफ़ ख़ार ही ख़ार हैं।

चलन से किसारी के न कोसों दूर हो जाऊं।
करो तारीफ़ मत इतनी कि मैं, मग़रूर हो जाऊं।।

मेरी राहों में दुनिया इसलिए पत्थर बिछाती है,
कि खाऊं ठोकरें इतनी कि मैं, माज़ूर हो जाऊं।

कशिश वह चाहिए मुझको किसी के हुस्ने-रंगीं की,
कि बज़्मे-नाज़ में जाने को मैं मजबूर हो जाऊं।

ख़ुदारा बख़्श दीजे वह तिलिस्मे-आशिक़ी मुझको,
कभी गुमनाम हो जाऊं, कभी मशहूर हो जाऊं।

शुआएं घेर लें मुझको जो तेरे रू-ए-ताबां की,
तेरे जलवों में ज़म होकर सरापा नूर हो जाऊं।

कहे इससे ज़ियादा और क्या आईना हस्ती का,
न ठुकरा इस क़दर मुझको कि चकनाचूर हो जाऊं।

यही तो चाहते हैं ऐ 'मयंक' इस दौर के रहबर,
कि अपनी मंज़िले-मक़सूद से मैं दूर हो जाऊं।

ये लाज़िम तो नहीं है साहिबे-ईमान हो जाएं।
मगर इतना ज़रूरी है कि हम इंसान हो जाएं।।

गुनाहों के उभर आए हैं इतने दाग़ चेहरे पर,
अगर अब आईना देखें तो हम हैरान हो जाएं।

खड़े हैं इसलिए दर पर तिरे सफ़ में फ़क़ीरों की,
हमारे हाल पर भी कुछ तिरे एहसान हो जाएं।

यक़ीनन बेमज़ा हो जाएगी फिर ज़िंदगी उसकी,
अगर इंसान के पूरे सभी अरमान हो जाएं।

दिलों में जो उतर जाए वही इक शेर काफ़ी है,
ज़रूरी तो नहीं हम साहिबे-दीवान हो जाएं।

बताए क्या कोई जाकर उन्हें फिर मुद्दआ दिल का,
जो सब कुछ जान कर भी ऐ 'मयंक' अन्जान हो जाएं।

जो थोड़ी हिन्दी-उर्दू जानते हैं।
बहर सूरत मुझे पहचानते हैं।।

वो ख़ुद को छोड़कर बज़्मे-अदब में,
कहां औरों को शायर मानते हैं।

कभी ख़ुद को भी फटकें और छानें,
हर इक को जो फटकते-छानते हैं।

कहां वो बैठते हैं दोस्तों में,
अलग जो अपनी चादर तानते हैं।

न दीजे इस जगह पहचान मेरी,
यहां सब लोग मुझको जानते हैं।

वही गिरते हैं हर इक की नज़र से,
जो सबको अपने से कम मानते हैं।

'मयंक' उनसे बड़ा कोई नहीं है।
जो ख़ुद को सबसे छोटा मानते हैं।

जिस दिये में तेल है बाती नहीं।
रोशनी उससे कभी आती नहीं।।
ज़ख़्म भर जाते हैं दिल के एक दिन।
उम्र भर लेकिन कसक जाती नहीं।।
मौत जब देती है दस्तक द्वार पर।
फिर कोई सूरत नज़र आती नहीं।।
तुम जो मिल जाते तो मेरी ज़िंदगी।
दर-बदर फिर ठोकरें खाती नहीं।
मैं तो अपनाता हूँ दुनिया को मगर।
क्यों ये दुनिया मुझको अपनाती नहीं।।
दीजिए जितना भी चाहे ग़म मुझे।
अब तबीयत ग़म से घबराती नहीं।।
उसको जीने की दुआ मत दीजिए।
रास जिसको ज़िंदगी आती नहीं।।
उसको होती ही नहीं मंज़िल नसीब।
ज़िंदगी जो ठोकरें खाती नहीं।।
क़हक़हों की बज़्म में हूँ मैं मगर।
मेरे होठों पर हंसी आती नहीं।।
आरज़ू जिसकी मुझे है ऐ 'मयंक'।
ज़िंदगी वह मर्तबा पाती नहीं।।

हमने आँसू बहुत बहाए हैं।
तब कहीं जाके मुस्कुराए हैं।।

साफ़ कुछ भी नजर नहीं आता।
यक-ब-यक रोशनी में आए हैं।।

छोड़ दे ज़िंदगी मेरा पीछा।
नाज़ तेरे बहुत उठाए हैं।।

इस दिखावे के दौर में हमने।
हर क़दम पर फ़रेब खाए हैं।।

भूल जाऊँ मैं किस तरह उनको।
ज़ह्नो-दिल पर जो मेरे छाए हैं।।

तेरी चाहत ने हौसला बख़्शा।
जब क़दम मेरे डगमगाए हैं।।

भूल जाऊँ मैं कैसे उनको 'मयंक'।
जो मुसीबत में काम आए हैं।।

अक़्ल कहती है कि हम अल्लाह वालों में रहें।
दिल ये कहता है, नहीं, ज़ुहरा–जमालों में रहें।।

यूं तो मरने के लिए मरना है सबको एक दिन।
ऐसा कुछ कर जाएं जो ज़िंदा मिसालों में रहें।।

इसलिए करते हैं रोशन अपनी पलकों पर चराग़।
तीरगी के दौर में भी हम उजालों में रहें।।

वह हमारा, हम हैं उसके, दोनों ही हैं उसके घर।
चाहे मस्जिद में रहें हम या शिवालों में रहें।।

बख़्श दे ऐसा हुनर दोनों को ऐ मेरे ख़ुदा।
तज़किरों में वह रहें और हम हवालों में रहें।।

उनकी बज़्मे–नाज़ में कुछ मांगने जाते नहीं।
अपना मक़सद है कि बस उसके ख़यालों में रहें।।

मसअले हल होंगे कैसे ज़िंदगी के ऐ 'मयंक'।
हम अगर उलझे हुए अपने सवालों में रहें।।

दर्द कुछ ऐसा बढ़ा ख़ुशहालियाँ कम हो गईं।
जब से मेरी आप से नज़दीकियाँ कम हो गईं।।

माँ वही, ममता वही, बच्चा वही, झूला वही।
वक़्त के होठों पे लेकिन लोरियाँ कम हो गईं।।

आपने बौने दरख़्तों से समर तो ले लिए।
राहगीरों के लिए परछाइयां कम हो गईं।।

मैं समर वाले दरख़्तों की तरह जब झुक गया।
लोग यह कहने लगे, ख़ुद्दारियां कम हो गईं।।

मासिवा मेरे सभी के आशियाँ महफ़ूज़ हैं।
अब्र के दामन की शायद बिजलियाँ कम हो गईं।।

चल 'मयंक' उठ, चल बुलाती है तेरी मंज़िल तुझे।
आसमाँ भी साफ़ है और आँधियाँ कम हो गईं।।

मैंने कहा हो जलवागर, उसने कहा नहीं–नहीं।
मैंने कहा मिला नज़र, उसने कहा नहीं–नहीं।।

मैंने कहा ये शाम है, उसने कहा ये जाम है।
मैंने कहा तो जाम भर, उसने कहा नहीं–नहीं।।

मैंने कहा कहाँ मिलें, उसने कहा जहाँ कहें।
मैंने कहा, कि बाम पर, उसने कहा नहीं–नहीं ।।

मैंने कहा दिखा झलक, उसने कहा कि कब तलक।
मैंने कहा, कि उम्र भर, उसने कहा नहीं–नहीं।।

मैंने कहा कि रुख़ इधर, उसने कहा है चश्मतर।
मैंने कहा, कि सब्र कर, उसने कहा नहीं–नहीं।।

मैंने कहा पयाम ले, उसने कहा सलाम ले।
मैंने कहा, ज़रा ठहर, उसने कहा नहीं–नहीं।।

मैंने कहा कि हो नज़र, उसने कहा कहाँ किधर।
मैंने कहा 'मयंक' पर, उसने कहा नहीं–नहीं।।

छोड़ के मंदिर–मस्जिद आओ वापस दुनियादारी में।
घर बैठे ही चैन मिलेगा बच्चों की क़िलक़ारी में।।

कैसे करें इज़हारे–मुहब्बत दोनों हैं दुश्वारी में,
हम अपनी हुशियारी में हैं, वह अपनी हुशियारी में।

अच्छे दिनों में सब थे साथी, सबसे था याराना भी,
लेकिन मेरे काम न आया कोई भी दुश्वारी में।

प्रदूषण का हाल बताऊँ या मैं अपना हाल कहूँ,
लुट गयी घर की सारी पूँजी बच्चों की बीमारी में।

पीने वालों की बातों को पीने वाला समझेगा,
तुमको क्या बतलाएं ज़ाहिद, लुत्फ़ है क्या मयख़्वारी में।

आपकी चाहत के मैं सदक़े ऐसी बहारें आई हैं,
रंग–बिरंगे फूल खिले हैं जीवन की फुलवारी में।

हिर्सो–हवस की इस दुनिया में यह भी कम तो नहीं 'मयंक',
उम्र हमारी जो गुज़री है, गुज़री है ख़ुद्दारी में।

क्या कहा? हम भी अंधेरों को मिटाना छोड़ दें।
आँधियों के ख़ौफ से दीपक जलाना छोड़ दें।।

फ़र्ज जो अपना है क्या उसको निभाना छोड़ दें,
क्या मुसीबत में किसी के काम आना छोड़ दें।

ज़िंदगी में लुत्फ़ जीने का उठाना छोड़ दें,
चार दिन की ज़िंदगी है मुस्कुराना छोड़ दें।

ये मोहब्बत, ये तमद्दुन, ये ख़ुलूस और ये वक़ार,
क्या बुज़ुर्गों से मिला हम ये ख़ज़ाना छोड़ दें।

ख़ुद ही आ जाएंगे खिंच कर एक दिन मेरे क़रीब,
वो रक़ीबों से अगर मिलना-मिलाना छोड़ दें।

हमको है मालूम अपने घर में पत्थर आएंगे,
पेड़ क्या इस डर से फल वाले लगाना छोड़ दें।

तंज़ के नश्तर चुभोएं सुन के जो अह्वाले-ग़म,
हाले-ग़म उनको 'मयंक' अपना सुनाना छोड़ दें।

ख़ुशी भूल जाएं कि ग़म भूल जाएं।
मुहब्बत में किस-किस को हम भूल जाएं।।

जो तुम याद आने का वादा करो तो,
ख़ुदा की क़सम, ख़ुद को हम भूल जाएं।

सुना है वहाँ कोई मज़हब नहीं है,
चलो मयकदे में, हरम भूल जाएँ।

इसी शर्त पर मैं भुला दूँगा उनको,
मुझे भी अगर मोहतरम भूल जाएँ।

इनायत की जिसने भी की हम पे बारिश,
'मयंक' उसके कैसे करम भूल जाएँ।

मेरे दामन में ख़ुशी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।
मेह्रबां मुझ पर कोई हो, ये ज़रूरी तो नहीं।।

मेरे भी शह्रे–मुहब्बत में मुख़ालिफ़ हैं बहुत,
दोस्ती सब से मेरी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।

धुंधले चेहरे के सबब और भी हो सकते हैं,
गर्द शीशे पे जमी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।

बेवफ़ाई ने तेरी तोड़ दिया शीशा–ए–दिल,
तू ने आवाज़ सुनी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।

तुमको आना है तो आ जाओ क़ज़ा से पहले,
उम्र पाबन्द मेरी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।

जो शबो–रोज़ इबादत में गुज़ारे रब की,
वह गुनाहों से बरी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।

जिसको अल्लाह ने दौलत से नवाज़ा हो 'मयंक',
उसकी क़िस्मत में ख़ुशी हो, ये ज़रूरी तो नहीं।

तुम को पता है, शह्र में जितने आग लगाने वाले हैं।
उससे ज़ियादा लोग यहाँ पर आग बुझाने वाले हैं।।

आग बुझाने वाले हों या आग लगाने वाले हों,
दोनों ही हर हाल में अपने हाथ जलाने वाले हैं।

कैसे सुख से जीवन काटें, बोलो इस मंहगाई में,
एक अकेली मेरी कमाई, दस–दस खाने वाले हैं।

दुनिया एक समय है जिसमें आते और जाते हैं लोग,
रुख़्सत हो गए यार हमारे, हम भी जाने वाले हैं।

हमने घर का कोना–कोना ख़ूब सजा कर रक्खा है,
वह जो ख़्वाबों में आते हैं, घर में आने वाले हैं।

हंसने–हंसाने वाले सब चेहरों की हक़ीक़त बतलाऊँ,
हमको पता है छुप–छुप कर वो अश्क बहाने वाले हैं।

कोई नहीं है संगी–साथी उसका भरे ज़माने में,
दुनिया में है 'मयंक' अकेला, आप ज़माने वाले हैं।

यक़ीं की हद से बाहर बोलते हैं।
जो कहते हैं कि पत्थर बोलते हैं।।

कोई बोले न बोले इस खंडर में,
मगर उल्लू बराबर बोलते हैं।

कटी है रात किस आलम में किसकी
सहर के वक़्त बिस्तर बोलते हैं।

यहाँ से चन्द क़दमों पर है मन्ज़िल,
यही बरसों से रहबर बोलते हैं।

न साहिल पर बसाओ कोई बस्ती,
ये तूफ़ानों के तेवर बोलते हैं।

हो जिसमें हम, वो सच्चाई मिटा दें,
यही नेज़े पे कुछ सर बोलते हैं।

'मयंक' ईमान पर ईमान लाओ,
हमीं से ये पयम्बर बोलते हैं।

जमीं पर धुंध, कोहरा, बदलियाँ हैं।
फ़लक पर मस्तियाँ ही मस्तियाँ हैं।।

नहीं है शौक़ मुझको रतजगे का,
मेरे घर में सयानी बेटियाँ हैं।

जो चुप है बस वही ज़िंदा रहेगा,
ज़बां खुलने पे सौ पाबन्दियाँ हैं।

यहाँ त्यौहार है या कोई कर्फ़्यू,
सड़क पर पर वर्दियाँ ही वर्दियाँ हैं।

मियां गीतों का मौसम भूल जाओ,
यहाँ तो सायरन हैं, सीटियाँ हैं।

कहो तो एक गुर्दा बेच डालूँ,
बहुत मँहगी चिता की लकड़ियाँ हैं।

'मयंक' इतनी ख़मोशी शह्र में क्यों,
ये ज़िंदा लोग हैं या अर्थियाँ हैं।

रहनुमा ज़िल्लत गवारा क्यों करें।
क़ौम की ख़िदमत गवारा क्यों करें।।

जो दवाओं से दुआ तक आ गए,
वो कोई हिकमत गवारा क्यों करें।

पाँव के नीचे नहीं है जब ज़मीन,
आसमानी छत गवारा क्यों करें।

मुफ़लिसों के और भी हमदर्द हैं,
आप से ज़हमत गवारा क्यों करें।

लोग बहुएं-चाहते हैं दूध सी,
सांवली रंगत गवारा क्यों करें।

हुस्न, दौलत, ऐश सबको चाहिए,
सन्त भी इज़्ज़त गवारा क्यों करें।

मुल्क पर हम जान देते हैं 'मयंक',
हम बुरी नीयत गवारा क्यों करें।

भुला देते हैं उनको, उनकी सेवा छोड़ देते हैं।
मवेशी जब हमारे दूध देना छोड़ देते हैं।।

मुसीबत है तो इसका सामना भी कीजिए डट कर,
वो बुज़दिल हैं जो घबराहट में दुनिया छोड़ देते हैं।

बहुत से लोग ज़िन्दा हैं यहाँ ख़ैरात पर लेकिन,
बहुत से लोग सरकारी वज़ीफ़ा छोड़ देते हैं।

समझ पाओगे कैसे तुम, हमारा गाँव में रहना,
जिन्हें है प्यार मिट्टी से, वो सोना छोड़ देते हैं।

पड़ोसी गाँव में अकसर बरसते रहते हैं बादल,
'मयंक' इस गाँव की मिट्टी को सूखा छोड़ देते हैं।

पैसे आँखों से ओझल हो जाते हैं।
सब दीवाने या पागल हो जाते हैं।।

शह्र की ख़ातिर कटते रहते हैं जंगल,
शह्र मगर कैसे जंगल हो जाते हैं।

सीधी-सादी उलझन के, इस दुनिया में,
कैसे टेढ़-मेढ़े हल हो जाते हैं।

लोगों को सपनों से मिलता है सोना,
मेरे सपने क्यों पीतल हो जाते हैं।

ख़न्जर नाहक़ ले आए हैं आप 'मयंक',
हम तो बातों से घायल हो जाते हैं।

जो तिरंगे को करना नमन छोड़ दें।
उनसे कह दो वो मेरा वतन छोड़ दें।।

पंचशील और अहिंसा के हामी हैं हम,
क्यों ख़ुलूसो-वफ़ा के चलन छोड़ दें।

सूर, ग़ालिब, कबीरा के वारिस हैं हम,
क्यों मुहब्बत भरे ये सुख़न छोड़ दें।

इस फ़लक पर निगाहें हैं जिस देश की,
कह रहा है कि पंछी गगन छोड़ दें।

कुछ तो बतलाइए, आज के दौर में,
हम कफ़न बांध लें या कफ़न छोड़ दें।

हर मुसाफ़िर को मन्ज़िल भी मिल जाएगी,
शर्त ये है मुसाफ़िर थकन छोड़ दें।

इसकी ख़ातिर ही दुनिया में आए 'मयंक',
प्यार का किस तरह से मिशन छोड़ दें।

ये दिन कभी जो हमें आज़माने लगते हैं।
हमें सभी की नज़र से गिराने लगते हैं।।

सियासत एक अलग अपनी दुनिया रखती है,
पहन के खादी, नए भी पुराने लगते हैं।

बहुत से लोग बनाते हैं मन्दिर और मज़ार,
ख़ुदा के नाम पे पैसे कमाने लगते हैं।

अजीब शख़्स है, दौलत को मारकर ठोकर,
ये कह रहा था कि मेहमान आने लगते हैं।

ख़बर ही छपती है, सरकार करती है एलान,
मुझे बताओ, किधर कारख़ाने लगते हैं।

मिली ज़रा सी ख़ुशी, थोड़ा सुख, ज़रा आराम,
हम अपना गुज़रा हुआ कल भुलाने लगते हैं।

बुराई आप की करता नहीं कोई भी शख़्स,
'मयंक' आप भी हमको सयाने लगते हैं।

फ़राइज़ को जहाँ कहते हों एहसानात, क्यों जाएँ।
वहाँ हम दिल में लेकर प्यार के ज़ज़्बात क्यों जाएँ।।

कोई जब दास्तां पर ग़ौर करने को नहीं राज़ी,
सुनाने के लिए हम दर्द के हालात क्यों जाएं।

जहाँ में जब कोई क़ीमत नहीं इन्सानियत की फिर,
जहाँ हर शख़्स हम से पूछता हो ज़ात, क्यों, जाएँ।

हमारे हाथ में जब नेकियों के हीरे-मोती हैं,
सिकन्दर की तरह दुनिया से ख़ाली हाथ क्यों जाएँ।

मिटाने पर तुले हैं जो हमारी सोच बुनियादी,
हम उन मुल्कों से लेने के लिए सौग़ात क्यों जाएं।

पता है, दोस्त बन कर भी वो ग़द्दारी ही करता है,
मिलाने के लिए उस शख़्स से हम हाथ क्यों जाएँ।

'मयंक' अब भी हैं कितने काम-धन्धे, गाँव-क़स्बों में,
मगर हर नौजवां कहता है, हम देहात क्यों जाएँ

(अः)

जब उगा अपने मन में प्यार स्वतः।
यूं लगा बज उठा सितार स्वतः।।

ज़िन्दगी को भी दीजिए अंकुश,
आएगा एक दिन सुधार स्वतः।

पहले अपने विचार शुद्ध करें,
मिट ही जाएगा हर विकार स्वतः।

अपना चेहरा निखारते हैं लोग,
जबकि फूलों पे है निखार स्वतः।

अपनी वाणी, चरित्र ठीक रखें,
आप भी होंगे शानदार स्वतः।

अपनी मेहनत, लगन दिखाएँ तो,
चल के आएंगे रोज़गार स्वतः।

भक्त ईश्वर से कह रहा है 'मयंक'
आएंगे आप मेरे द्वार स्वतः

हर एक कण में बसते हैं भगवान मूलतः।
मिट्टी का एक ढेर है इन्सान मूलतः।।

कहने को कोई कुछ भी कहे सच रहेगा सच,
ये वन्दना-भजन भी हैं यश गान मूलतः।

हालात थे कुछ ऐसे कि हम भूल ही गए,
क्या है हमारे शहर की पहचान मूलतः।

सारी कथाएँ पढ़ के पता चल गया हमें,
अभिशाप ही तो होता है वरदान मूलतः।

मौसम, हवा को व्यर्थ ही देते हैं लोग दोष,
भगवान का प्रकोप है तूफ़ान मूलतः।

कुन्बा बंटा, मकान का नक़्शा बदल गया,
यह जो दुकान है, ये थी दालान मूलतः।

ग़ज़लें 'मयंक' मैंने सजाईं किताब में,
ये शायरी है हिन्दी का दीवान मूलतः।

(क)

छाई हुई है गर्दे सफ़र दूर-दूर तक।
आता नहीं है कुछ भी नज़र दूर-दूर तक।।

उनके यहाँ तो जश्ने-चराग़ां है चार सू,
जलते नहीं चिराग़ इधर दूर-दूर तक।

राही को तपती धूप में राहत जो दे सके,
ऐसा नहीं है कोई शजर दूर-दूर तक।

आने को इक मुक़ाम पे आते हैं ज़लज़ले,
होता मगर है इनका असर दूर-दूर तक।

आँगन जो बांटना हो तो चुपचाप बांट लो,
पहुँचेगी वरना इसकी ख़बर दूर-दूर तक।

तामीर का ये दौर है, हम कैसे मान लें,
पेशे-नज़र हैं जबकि खंडर दूर-दूर तक।

जीने की जिसको कोई भी ख़्वाहिश न हो 'मयंक',
ऐसा नहीं है कोई बशर दूर-दूर तक।

उठाएं ज़ुल्म कब तक और झेलें सख़्तियाँ कब तक।
लबों पर दोस्तो मजबूर के ख़ामोशियाँ कब तक।।

ज़माना पेट भरने के लिए क्या-क्या नहीं करता,
इसे नाकों चने चबवाएंगी ये रोटियाँ कब तक।

तेरे बंदे टके के भाव में नीलाम होते हैं,
बता इंसां के जिस्मों की लगेंगी बोलियाँ कब तक।

चलेंगे कब तलक मुफ़लिस के अरमानों पे बुलडोजर,
कि महलों के लिए क़ुर्बान होंगी खोलियाँ कब तक।

सरे-बाजार यूँ कब तक बिकेंगे ये जवाँ लड़के,
सुहागन डोलियाँ बनती रहेंगी अर्थियाँ कब तक।

यहाँ दैरो-हरम के नाम पर नफ़रत के शोलों को,
हवा देती रहेंगी दोस्तो ये कुर्सियाँ कब तक।

उठो और उठके बतला दो ज़रा औक़ात तुम अपनी,
'मयंक' इस दौर की सुनते रहोगे घुड़कियाँ कब तक।

(क़)

जिनसे मिलने का है मुझको इश्तियाक़।
क्यों उड़ाते हैं वही मेरा मज़ाक।।

आइए और मेरे दिल से पूछिए,
कट रही है किस तरह शाम-ए-फ़िराक़।

जल उठीं, यादों की शम्एं जल उठीं,
हो गए फिर घर के रोशन ताक़-ताक़।

वह अचानक उनका मिलना राह में,
यह मुहब्बत है या कोई इत्तिफ़ाक़।

बाप का यह हक़ है सदियों से मगर,
अब तो बेटे बाप को करते हैं आक़।

सोच कर औरों को बतलाएँ 'मयंक',
बद से बदतर चीज़ होती है तलाक़।

शौक़ में यह शौक़ की हद से गुज़र जाने का शौक़।
दर हक़ीक़त शौक़ है यह एक दीवाने का शौक़।।

हो गई बाज़ार में रुसवाइयों की इन्तिहा,
आप अब तो छोड़ दीजे, उनके घर जाने का शौक़।

नाम पर मेह्रो-वफ़ा के रात भर जलते रहे,
किसके बस का है बताओ, शम्अ-परवाने का शौक़।

वो कशिश दे दी है तूने ज़िन्दगी को ऐ ख़ुदा,
छोड़ कर दुनिया को तेरी किसको है जाने का शौक़।

जो बशर चेहरे के दागों से रहा ना आशना,
क्या करेगा पालकर वह आईना ख़ाने का शौक़।

कमसिनी में प्यार के चक्कर में मत पड़िए 'मयंक',
आप तो फ़रमाइए बस खेलने-खाने का शौक़।

(ख)

दाएँ, बाएँ, नीचे और ऊपर न देख।
प्रश्न करता जा, मिरे उत्तर न देख।।

घर में रहना ही समझदारी है आज,
सबसे मौसम कह गया, बाहर न देख।

बस अंगूठा ही लगाना है हमें,
हमसे मुखिया ने कहा, अक्षर न देख।

ज़ह्र पीना ही मुक़द्दर है यहाँ,
कौन बन पाएगा अब शंकर, न देख।

पास पैसे हैं तो अपना पेट भर,
शह्र में तू दान के लंगर न देख।

यह गया तो दूसरा बन जाएगा,
जान पर ख़तरा है, बच जा, घर न देख।

तेरी मन्ज़िल सामने ही है 'मयंक'
ध्यान रख, अब लीक से हटकर न देख।

सुर्ख़ चिंगारियाँ, बुझी सी राख।
हर तरफ़ है दबी-दबी सी राख।।

फट गया है कहीं पे ज्वालामुखी,
हर तरफ़ है धुआँ, बिछी सी राख।

इन दिनों कुछ अजीब है मौसम,
आग-आँधी सी है, नदी सी राख।

मौत का खेल होने वाला है,
सबको दिखलाएगी बतीसी राख।

क़ीमती चीज़ें ऐसे बनती हैं,
हमने हड्डी जलाई, पीसी राख।

आओ, यह भस्म है अमीरों की,
देख लो तुम भी आज घी सी राख।

अन्त दुखदायी है 'मयंक' मगर,
मुझको लगती है शायरी सी राख।

(ख़)

फिर गया है शम्अ की जानिब से परवाने का रुख़।
आइए हम भी बदल लें अपने अफ़साने का रुख़।।

देखना यह है कि क्या-क्या गुल खिलाता है जुनूँ,
आज गुलशन की तरफ़ है एक दीवाने का रुख़।

फिर इधर से होके गुज़रा क्या कोई परदा नशीं,
इतना दीदा ज़ेब क्यों है आज वीराने का रुख़।

यह मेरी नज़रों का धोखा है कि सपना है कोई,
अजनबी सा लग रहा है जाने-पहचाने का रुख़।

जब से मयख़ाने से वापस आए हैं शेख़े-हरम,
बदला-बदला सा नज़र आता है समझाने का रुख़।

देखकर उस शोख़ की आराइशे-हुस्नो-जमाल,
फीका-फीका सा लगे है आईना ख़ाने का रुख़।

इस तरह तामीर कीजे दौरे-हाज़िर में 'मयंक',
दैरो-काबा की तरफ़ हो अपने मयख़ाने का रुख़।

दीन की बातें अपनी जुबां से फ़रमाने को शैख़।
रोज़ हमारे घर आते हैं समझाने को शैख़।।

मयख़ाना आबाद रहे तुम मांगो दुआएँ ख़ैर,
पानी पी-पी कर मत कोसो मयख़ाने को शैख़।

मंदिर-मस्जिद दोनों ही हैं उस मालिक के घर,
नज़रे-हिक़ारत से मत देखो बुतख़ाने को शैख़।

जी भर कर भी करना मज़म्मत बादा ख़्वारी की,
मुँह से लगा कर पहले देखो पैमाने को शैख़।

पीने से नफ़रत है इनको लेकिन शाम ढले,
गाहे-गाहे आ जाते हैं कुछ खाने को शैख़।

मस्जिद-मयख़ाने की दूरी अब मिट जाएगी,
कितने प्यार से चूम रहे हैं दीवाने को शैख़।

ख़ूब है इनकी बादानोशी का अंदाज़ 'मयंक',
बिंते-अनब से आ जाते हैं टकराने को शैख़।

(ग)

आईना दिखलाएँ तो हमसे बिगड़ जाते हैं लोग।
हाथ धोकर फिर हमारे पीछे पड़ जाते हैं लोग।।

जिंदगानी का सफ़र भी किस क़दर दिलदोज़ है,
राह में मिलते हैं और मिलकर बिछड़ जाते हैं लोग।

अक्ल से कोई यहाँ पर काम लेता ही नहीं,
इक ज़रा सी बात पर आपस में लड़ जाते हैं लोग।

जो न समझाने से समझें कौन समझाए उन्हें,
आदतन भी अपनी-अपनी ज़िद पे अड़ जाते हैं लोग।

यह ज़रूरी तो नहीं हों ज़ुल्फ़े-जानां के असीर,
खुद लगाई बंदिशों में भी जकड़ जाते हैं लोग।

नफ़रतों की आँधियों को हम कहें तो क्या कहें,
ऐ मुहब्बत तेरे चलते भी उजड़ जाते हैं लोग।

क्या करूँ मजबूर हूँ मैं अपनी आदत से 'मयंक',
नुक़्ताचीनी पर मेरी अकसर उखड़ जाते हैं लोग।

हो गया है मुझसे हर इक जाना-पहचाना अलग।
देखकर हालत मेरी तुम भी न हो जाना अलग।।

शम्अ से जब रह नहीं सकता है परवाना अलग,
कैसे रह सकता है तुझसे तेरा दीवाना अलग।

इस क़दर वीरानगी है मयकदे में इन दिनों,
जाम से मीना अलग है खुम से पैमाना अलग।

आप इन महलों को लेकर जाएंगे आख़िर कहाँ,
हम बना लेंगे चमन में अपना काशाना अलग।

यूँ तो वाबस्ता हैं दोनों ज़िंदगानी से मगर,
उनका अफ़साना अलग है, मेरा अफ़साना अलग।

मैं पिया करता हूँ अकसर चश्मे-साक़ी से शराब,
और रिंदों से है मेरा ज़ौक़े-रिंदाना अलग।

एक रब्ते-ख़ास है पीरे-मुग़ाँ से ऐ 'मयंक',
हम बना सकते हैं वरना अपना मयख़ाना अलग।

(ग़)

जिस घड़ी जल जाएंगे दिल के चराग़।।
ख़ुद-ब-ख़ुद हो जाएंगे रोशन दिमाग़।।

आएगा गुलशन में जब जाने-बहार,
दिल चमन का हो उठेगा बाग़-बाग़।

मसलहत उसकी है क्या, जाने वही,
दे दिया इंसां को जो रब ने दिमाग़।

क्या पता उसका बताएँ हम तुम्हें,
अपना जब मिलता नहीं हमको सुराग़।

शामे-ग़म मेरी चराग़ां हो गई,
जल रहे हैं मेरी पलकों पर चराग़।

हंस रहे हैं क्यों गुनाहों पर मिरे,
वह कि ख़ुद जिनका है दामन दाग़-दाग़।

मोतक़िद हम तो सभी के हैं 'मयंक',
'मीर' हों, 'मोमिन' हों 'ग़ालिब' हों कि 'दाग़'।

तुम बुझा दो नफ़रतों का हर चराग़।
फूँक देंगे वरना सारा घर चराग़।।

पहले घर के ताक़ पर रक्खो दिया,
फिर जलाओ तुम मज़ारों पर चराग़।

गर न उट्ठें नफ़रतों की आंधियाँ,
होंगे रोशन प्यार के घर-घर चराग़।

देखने में नूर का पैकर तो है,
ज़हनियत के हैं मगर कमतर चराग़।

कैसे समझाएँ नई तहज़ीब को,
क़ुमक़ुमों से लाख हैं बेहतर चराग़।

मानते हैं वक़्त है शब का 'मयंक',
हम जलाते हैं मगर दिन भर चराग़।

(घ)

आ गए शक्ल फिर बदल कर घाघ।
जाएँगे फिर सभी को छल कर घाघ।।

रह्म मत खाना, ठोकरें देना,
आएं घुटनों के बल भी चल कर घाघ।

पानी उबले तो भाप बन जाए,
आदमी ऐसे ही उबल कर घाघ।

राजनेता बहुत सयाने हैं,
आए हैं जेल से निकलकर घाघ।

सबसे ऊँचे पहाड़ पर पहुँचे,
अब गिरेंगे फिसल-फिसल कर घाघ।

आमने-सामने लड़ेंगे आज,
पीठ पीछे तू वार कल कर घाघ।

बच गया है 'मयंक' फन्दे से,
रह गए अपने हाथ मल कर घाघ।

उजले, भूरे, ऊदे, सुर्मई और कजरारे मेघ।
आसमान पर घूम रहे हैं कितने सारे मेघ।।

धरती और गगन में भी अब युद्ध छिड़ेगा क्या,
ज़ोर-ज़ोर से बजा रहे हैं क्यों नक़्क़ारे मेघ।

कालिदास की मेघदूत पढ़ लो तो जानोगे,
प्रेमी तक चिट्ठी पहुंचाते हैं हरकारे मेघ।

जेठ मास की लू-गर्मी में नभ पर छाए हैं,
ऐसा लगता है बरसाएंगे अंगारे मेघ।

खुल कर बरसे हैं, शहरों ने राहत पाई है,
काश किसानों के भी कर दें वारे-न्यारे मेघ।

बच्चों को हाथी, घोड़ा, ख़रगोश दिखे इनमें,
प्यारे-प्यारे बच्चों के हैं प्यारे-प्यारे मेघ।

हम 'मयंक' आ रे, आ रे, कहते हैं आस लिए,
ऐसा मत करना हम कह दें जा रे, जा रे मेघ।

(च)

इश्क़ में क्या खोया, क्या पाया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।
क्यों ये तसव्वुर ज़ह्न में आया, मैं भी सोंचूं तू भी सोच।।

हर चेहरे पर चेहरा हो तो कैसे हम यह पहचानें,
कौन है अपना कौन पराया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।

क़ब्र में जाकर मिट्टी में मिल जाने वाली मिट्टी को,
यारों ने फिर क्यों नहलाया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।

तू भी क़ातिल, मैं भी क़ालि मक़तल हम दोनों के दिल,
किसने–किसका ख़ून बहाया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।

फूल खिलाता था जो कल तक, आज वो कांटे बोता है,
फ़र्क़ आख़िर यह कैसे आया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।

दुनिया भी इक सरमाया है, वो दुनिया भी सरमाया,
कौन सा अच्छा है सरमाया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।

जब तक सूरज सर पे नहीं था, साथ 'मयंक' ये चलता था,
पांव तले अब क्यों है साया, मैं भी सोचूं तू भी सोच।

आज अगर दीवार खड़ी है तुम दोनों के बीच।
कोई बात ज़रूर हुई है तुम दोनों के बीच।।

बन के शोला भड़क उठेगी इसका ख़तरा है,
जो चिंगारी सुलग रही है तुम दोनों के बीच।

कहने को तो एक हुए हैं दोनों ही के दिल,
दूरी फिर क्यों आज बनी है तुम दोनों के बीच।

कल तक हमने जो देखा था ज़हरीला माहौल,
आज भी क्या माहौल वही है तुम दोनों के बीच।

मुद्दत से ये सोच रहा है कैसे भरे 'मयंक',
नफ़रत की जो खाई खुदी है तुम दोनों के बीच।

सबने देखा है तीरगी का सच।
क्या बताऊँ मैं रोशनी का सच।।

मौत सा जीते रहना, मर जाना,
हमने झेला है ज़िन्दगी का सच।

उस तरफ़ दावे और वादे हैं,
इस तरफ़ सूखती नदी का सच।

आदमीयत कहीं नहीं मिलती,
बस यही है नई सदी का सच।

यह चिता की धुआं है आँखों में,
वरना आँसू कहाँ खुशी का सच।

आबरू पर दी मौत को तरजीह,
आओ दिखलाऊँ बेबसी का सच।

आप बस शेर पढ़ते रहिए 'मयंक',
मैं बताऊँगा शायरी का सच।

(छ)

कह रहे हैं आप कुछ, अख़बार कुछ।
हैं मगर पेशे-नज़र आसार कुछ।।

राज़ घर का घर में रखना है अगर,
और ऊँची कीजिए दीवार कुछ।

इसलिए दामन भिगोकर आए हैं,
मिल गए थे राह में ग़मख़्वार कुछ।

ऐ हवेली, इस पे थोड़ा ध्यान दे,
कह रही है वक़्त की रफ़्तार कुछ।

सारे टुकड़े ख़ुद ही मत खा जाइए,
इस तरफ़ भी फेंकिए सरकार कुछ।

जब वफ़ाओं का सिला बंटने लगा,
हाथ उठा कर आ गए ग़द्दार कुछ।

मेरे बारे में पता कर लो 'मयंक',
मेरे दुश्मन कुछ कहेंगे, यार कुछ।

सबसे मत चिंगारी पूछ।
आग है कितनी भारी पूछ।।

कितने भोले चेहरे हैं,
तू इनकी मक्कारी पूछ।

कौन समन्दर है मीठा,
कौन नदी है खारी पूछ।

देश भक्त को इज़्ज़त दी,
अब उसकी ग़द्दारी पूछ।

शान्ति सभा में जा, लेकिन,
होगी मारामारी, पूछ।

दंगा तो निश्चित होगा,
जा सबसे तैयारी पूछ।

तू क्या है इन्सान 'मयंक',
नेता इच्छाधारी पूछ।

(ज)

कभी बहार की रंगत, कभी ख़िज़ां का मिज़ाज।
कब एक जैसा रहा गर्दिशे-जहाँ का मिज़ाज।।

गुरूरे-वक़्त से कह दो कि होश में आये,
ज़मीन पूछने वाली है कहकशां का मिज़ाज।

हमारे क़द की बुलंदी को नापने वालो,
हमारा हैसला रखता है आसमां का मिज़ाज।

नई बहार की ये दोरुख़ी अरे तौबा,
गुलों से मिलता नहीं सहने-गुलसितां का मिज़ाज।

समझने वाले मेरे दिल का मुद्दआ समझें,
है लफ़्ज़-लफ़्ज़ से ज़ाहिर मिरी ज़बां का मिज़ाज।

'मयंक' मंज़िले-मक़सूद का ख़ुदा हाफ़िज़,
है कारवां से अलग मीरे-कारवां का मिज़ाज।

अब मुहब्बत के हों या हों जंग के यारो महाज।
हमने देखे हैं बहुत से रंग के यारों महाज।।

फ़ित्नाकारों के इरादे मिल गए सब ख़ाक में।
संग से तोड़े गए जब संग के यारो महाज।

भाई की गर्दन पे भाई ही की शमशीरें तनें,
क्या करोगे जीत कर इस ढंग के यारो महाज।

अपने हों या ग़ैर हों, होली में मिलते हैं गले,
आपने देखे नहीं हुड़दंग के यारो महाज।

जिस्म या धरती पे हमला तो सुना था ऐ 'मयंक',
अब सभी कहने लगे हर अंग के यारो महाज।

कुछ दिनों पहले तो चंगा था समाज।
इन दिनों चर्चा में है अन्धा समाज।।

हैसियत रिश्तों की ज़ीरो हो गई,
पहले तो ऐसा न था अपना समाज।

हादसों में हाथ इसका भी तो है,
क्या ज़बां खोलेगा ये गूंगा समाज।

सच कहूँ, नफ़रत सी होने लगती है,
जब सुनाता है मुझे दुखड़ा समाज।

यह सवाल आता है अकसर ज़ह्न में,
कौन सी दुनिया है ये, कैसा समाज।

दूसरों के दर्द में सोया रहा,
जश्न में तो रात भर जागा समाज।

आप सच्ची बात कहते हैं 'मयंक',
आदमी का बदनुमा चेहरा समाज।

(ज़)

दस्तख़त हैं तो काम का काग़ज़।
वरना होता है नाम का काग़ज़।।

सारा कमरा भरा है ख़ुश्बू से,
किसने भेजा सलाम का काग़ज़।

आज रद्दी है शख़्सियत मेरी,
था कभी एहतराम का काग़ज़।

क्या करेगा कोई बग़ावत अब,
आ गया रोक-थाम का काग़ज़।

हाकिमे-वक़्त बोला ग़ुस्से में,
कौन लाया ग़ुलाम का काग़ज़।

ज़िद सफ़र है, सफ़र में रहना है,
क्या करूँगा क़याम का काग़ज़।

सल्तनत टूटने लगी है 'मयंक'
पढ़के देखो अवाम का काग़ज़।

पुरसिशे-ग़म को हमारी आएंगे बंदा नवाज़।
और जीने की दुआ दे जाएंगे बंदा नवाज़।।

इस यक़ीं के साथ मैं जाता हूँ उनकी बज़्म में,
अपने बन्दे पर करम फ़रमाएंगे बंदा नवाज़।

ये कहाँ मुमकिन है हमसे फेर लें अपनी निगाह,
अपने बन्दे को ज़रूर अपनाएंगे बंदा नवाज़।

जो भटकते फिर रहे हैं ज़िंदगी की राह में,
राह पर इक दिन उन्हें भी लाएंगे बंदा नवाज़।

हर्फ़ फिर आ जाएगा बंदा नवाज़ी पर 'मयंक',
हम ग़रीबों को अगर ठुकराएंगे बंदा नवाज़।

कोई कनीज़ हो या मुमताज़।
अपने हुस्न पे सबको नाज़।।

चुप रह कर भी क्या पाया,
आँखें कह गईं सारे राज़।

मैं तो यहाँ परदेसी हूँ,
किसने दी मुझको आवाज़।

सबके निशाने चूक गए,
बनते थे सब तीर अन्दाज़।

दोस्त नहीं, ये दुश्मन हैं,
भांडा फोड़ेंगे हमराज़।

रात कभी की बीत गई,
सुब्ह का कब होगा आग़ाज़।

सच्चाई पर आज 'मयंक'
किसको मिलता है एज़ाज़।

जिससे भी मिलिए वही है ख़ुदग़रज़।
आजकल हर आदमी है ख़ुदग़रज़।।

दूसरों की फ़िक्र किसको है यहाँ।
मतलबी कोई, कोई है ख़ुदग़रज़।

ज़िंदगी का उसने कब बदला चलन,
ख़ुदग़रज़ तो आज भी है ख़ुदग़रज़।

अपने मतलब के लिए जीते हैं सब,
हर किसी की ज़िंदगी है ख़ुदग़रज़।

आपको एहसास होता ही नहीं,
आपकी सन्जीदगी है ख़ुदग़रज़।

इन दिनों फ़ैशन में शामिल है ये चीज़,
दुश्मनी क्या, दोस्ती है ख़ुदग़रज़।

हम कहें कैसे किसी से ऐ 'मयंक',
जो अदा है आपकी, है ख़ुदग़रज़।

आशिक़ी बेलौस, उलफ़त बेग़रज़।
कौन करता है मुहब्बत बेग़रज़।।

हम हैं क़ायल उनके ही किरदार के,
वह जो करते हैं इनायत बेग़रज़।

उससे कोई क्या करे कोई सवाल,
आदमी वह है निहायत बेग़रज़।

क्या कहें जब मुद्दआ कुछ भी नहीं,
कर रहे हैं तेरी ख़िदमत बेग़रज़।

अपनी-अपनी जेबें भरते हैं सभी,
कौन करता है हुकूमत बेग़रज़।

आपकी महफ़िल में सब हैं मतलबी,
बस हमीं करते हैं शिरकत बेग़रज़।

रहमतें उन पर बरसती है 'मयंक',
जो भी करते हैं इबादत बेग़रज़।

अब के दंगों में खो गए महफ़ूज़।
लेकिन अब आप हो गए महफ़ूज़।

क्या अदालत, कहाँ का था इन्साफ़,
अपना दामन तो धो गए महफ़ूज़।

जो नहीं आए, वो हैं ख़तरे में,
तेरे क़दमों में जो गए महफ़ूज़।

ये हिफ़ाज़त भी कितनी अच्छी है,
क़ैद ख़ाने में तो गए, महफ़ूज़।

जब से सरकार ने रखा है हाथ,
सब ये कहते हैं, हो गए महफ़ूज़।

जश्न होने लगा है बस्ती में,
आज कब्रों में सो गए महफ़ूज़।

राजधानी में शोर सा है 'मयंक',
जैसे नश्तर चुभो गए महफ़ूज़।

कैसे हर ज़रूरत को, कह दें हम ख़ुदा हाफ़िज़।
किस तरह से दौलत को कह दें हम ख़ुदा हाफ़िज़।।

बस्ती-बस्ती, हर घर में, नफ़रतें ही जीती हैं,
क्या करें, मुहब्बत को कह दें हम ख़ुदा हाफ़िज़।

जितनी लम्बी चादर हैं पांव उतने ही फैलाएँ,
झूठी शानो-शौकत को कह दें हम ख़ुदा हाफ़िज़।

इक यतीम बच्चे को पांच सौ की दी ख़ैरात,
उसने पूछा मेहनत को कह दें हम ख़ुदा हाफ़िज़।

अम्न कैसे फैलेगा सोचिए, 'मयंक' इस पर,
आइए सियासत को कह दें हम ख़ुदा हाफ़िज़।

(झ)

उम्मीद नहीं की थी मगर आ ही गई सांझ।
जीवन के तमाशे को यहाँ खा ही गई सांझ।।

एक वीर सिपाही सा डटा था वो गगन पर,
सूरज को भी गिरता हुआ दिखला ही गई सांझ।

हालांकि बहुत भीड़ थी, उत्साह नहीं था,
उकताए हुए लोग थे, उकता ही गई सांझ।

कुछ लोगों को अच्छे नहीं लगते थे ये दिन रात,
धुंधले से उजाले में उन्हें भा ही गई सांझ।

दिन मौन में डूबा रहा और लोग भी चुप थे,
कोयल की तरह कूक के बतिया ही गई सांझ।

कुछ शोर, कहीं खेल-तमाशों से थी रौनक़,
दरिया के किनारे हमें ललचा ही गई सांझ।

आई थी 'मयंक' आज सहर रात के जैसी,
लोगों के दिमाग़ों पे मगर छा ही गई सांझ।

कुछ भारी जीवन का बोझ।
उसके ऊपर मन का बोझ।।

नन्हे-नन्हें बच्चों की,
शिक्षा में दर्शन का बोझ।

अब कमरे और इक दालान,
अब कैसा आंगन का बोझ।

रामकली को मरना था,
ट्रक पर था दस टन का बोझ।

चीज़ें बेहद भारी हैं,
हल्का सा वेतन का बोझ।

मजबूरी में गिरवी है,
नाज़ुक सा कंगन का बोझ।

लाश बनेगी राख 'मयंक',
लाख जले चन्दन का बोझ।

(ट)

शबे-फ़ुर्क़त सूक़ूं पाया न इस करवट न उस करवट।
दिले-मुज़्तर को चैन आया न इस करवट न उस करवट।।

मुख़ातिब उनको करने को बदलते रह गए पहलू,
मुहब्बत का सिला पाया न इस करवट न उस करवट।

हुए रुख़सत वो जिनको देखने की मुझको ख़्वाहिश थी,
वही मुझको नज़र आया न इस करवट न उस करवट।

बदलने को तो हर लम्हा ही मैंने करवटें बदलीं,
क़रारे-ज़िंदगी पाया न इस करवट न उस करवट।

ज़माने में 'मयंक' आने को तो सौ इन्क़लाब आए,
ज़माना फिर भी रास आया न इस करवट न उस करवट।

हैं ज़मीं पर बचे-खुचे गिरगिट।
रहनुमा सारे हो गए गिरगिट।।

हर जगह अब दिखाई देते हैं,
इससे पहले कहाँ पे थे गिरगिट।

राजनेताओं ने पछाड़ दिया,
आज गिरगिट हैं नाम के गिरगिट।

शाम से सुब्ह तक सब इन्सां हैं,
और फिर ठीक दस बजे, गिरगिट।

मैं ख़ुदा से दुआएँ करता हूँ,
काश गिरगिट मुझे लगे गिरगिट।

इनमें भी ज़ात-पांत होने लगी,
सरकटे और दुमकटे गिरगिट।

कल यहाँ दंगा हो गया था 'मयंक',
रात भर झूमते रहे गिरगिट।

(ठ)

धन ही लाता है ज़िन्दगी में ठाठ।
कौन करता है भुखमरी में ठाठ।।

गाँव वाले सनक गए हैं क्या,
आ गई बाढ़ तो नदी में ठाठ।

पुण्य का काम तो नहीं होगा,
पापी करते हैं तीरगी में ठाठ।

एक सपना है मेरा बचपन से,
जून में ऐश, जनवरी में ठाठ।

किसको बरसात रास आती है,
किसको रास आएगा नमी में ठाठ।

हर सड़क पर जमा है सन्नाटा,
जाइए देखिए गली में ठाठ।

गिर रहा है 'मयंक' इसका चरित्र,
बढ़ गए जब से आदमी में ठाठ।

आपका यह फ़रमाना झूठ।
मुझसे है याराना, झूठ।।

दुनिया झूठ, ज़माना झूठ,
जग का ताना-बाना झूठ।

सच का साथ न छोड़ेंगे,
बोले लाख ज़माना झूठ।

सुन के हक़ीक़त बोले वो,
प्यार का है अफ़साना झूठ।

मुल्क में हर सू ख़ुशहाली,
ख़ूब है यह शाहाना झूठ।

काम है यह फ़रज़ानों का,
क्या जाने दीवाना झूठ।

बोले है मयख़्वारों से,
क्यों मीरे-मयख़ाना झूठ।

ऐ 'मयंक' गर्दन कट जाए,
होठों पर मत लाना झूठ।

(ड)

आ के तोड़ेगी ख़िज़ां रंगी नज़ारों का घमंड।
चार दिन का है चमन में यह बहारों का घमंड।।

बस जरा तूफ़ान थोड़ा और बढ़ने दीजिए,
डूब जायेगा किनारों पर किनारों का घमंड।

यह हक़ीक़त गर्दिशे-दौरां को भी मालूम है,
हश्र तक क़ायम रहेगा चाँद तारों का घमंड।

पा के शह शैतानियत की सरहदे-कश्मीर पर,
और बढ़ता जा रहा है फ़ित्नाकारों का घमंड।

हो के गुज़ारा है इधर से फिर कोई पर्दा नशीं,
आसमां छूने लगा फिर रेगज़ारों का घमंड।

मीर, ग़ालिब तो नहीं हैं फिर भी ऐ हज़रत 'मयंक',
रख दिया है तोड़कर हमने हज़ारों का घमंड।

हादसे के वक्त कब आया मददगारों का झुन्ड।
दोस्तों की शक्ल में आया अदाकारों का झुन्ड।।

आप ज्ञानी हैं तो जाकर कीजिए इसका पता,
क्यों लगा रहता है मयख़ाने में मयख़्वारों का झुन्ड।

इस तरक़्क़ी को तरक़्क़ी मान लें हम किस तरह,
हर तरफ़ तो देश में बैठा है बेकारों का झुन्ड।

कल ख़रीदारों ने क़ीमत ही लगाई थी मगर,
बेचने फ़न आ गया ख़ुद ही क़लमकारों का झुन्ड।

आपने सुल्तान का दरबार देखा है कभी,
चापलूसों का है मजमा और मक्कारों का झुन्ड।

आप मन्दिर और मस्जिद की न कीजे मुझसे बात,
हर इबादतगाह अब हैं जैसे अंगारों का झुन्ड।

आम इन्सानों का दुखड़ा भूल ही जाएँ 'मयंक',
इन दिनों जम्हूरियत भी है ज़मींदारों का झुन्ड।

(ड़)

पहले अपने आप से लड़।
फिर दुश्मन पर भारी पड़।।

उतना तनावर होगा पेड़,
जितनी गहरी होगी जड़।

वही कहेगा अच्छा शेर,
फ़न पर होगी जिसकी पकड़।

गुलशन-गुलशन फूल खिले,
मेरे चमन में क्या पतझड़।

दौलत, औरत और ज़मीन,
ये सब हैं झगड़े की जड़।

छोड़ दे मेरा साथ 'मयंक',
अब मत मेरे पीछे पड़।

ख़ुद से पहले नाता तोड़।
फिर तू रब से रिश्ता जोड़।।

इक दिन सबको मरना है,
इस सच से मत मुँह को मोड़।

अबके बहारों ने अपना लहू,
क़तरा-क़तरा लिया निचोड़।

हम ही नहीं तन्हा मुफ़लिस,
हम जैसे हैं कई करोड़।

अमृत भी मिल जाएगा,
ज़ह्र का पहले ढूंढो तोड़।

सारे थक कर चूर हुए,
आगे जाने की थी होड़।

फ़र्ज़ निभा बस अपना 'मयंक',
क्या है दुनियादारी, छोड़।

(ढ)

पहले अपने लिए सवारी ढूँढ
बोझ मत इतने भारी-भारी ढूँढ

सारे हालात जस के तस हैं अभी
अपने अन्दर तू क्रान्तिकारी ढूँढ

कौन पालन करेगा, यह बतला
कौन फ़तवा करेगा जारी ढूँढ

सब शहन्शाह बन के आते हैं
इस तरफ़ कौन है भिख़ारी ढूँढ

अब ज़बां हो चुकी है बेमक़सद
वक़्त की मांग है कटारी ढूँढ

तूने संसद नहीं खंगाली क्या
हैं वहां ढेर से मदारी ढूँढ

द्वार मन्दिर का आ चुका है 'मयंक'
जेब में अपने रेज़गारी ढूँढ

इन आँखों में आस न ढूंढ
मुर्दों में एहसास न ढूंढ

खेत बराए नाम हुए
फ़स्लें क्या हैं, घास न ढूंढ

ढूंढ ले बाहर कोई दलाल
हाकिम का इजलास न ढूंढ

राम तो मिल भी सकते हैं
लेकिन तुलसीदास न ढूंढ

जितना है, उतना पढ़ लें
कालजयी इतिहास न ढूंढ

सब शक ले कर जीते हैं
लोगों में विश्वास न ढूंढ

कविताओं में पढ़ ले 'मयंक'
जीवन में मधुमास न ढूंढ

(ढ़)

पढ़ सके जो तू अगर, इन्सान पढ़।
किसमें कितना है बचा ईमान, पढ़।।

याद रखता है तू अपने ही सभी,
दूसरों के भी कभी एहसान पढ़।

ये बही खाते नहीं देते सुकून,
तुझको गर मिलता है इत्मीनान, पढ़।

पढ़, तू अपना ज्ञान थोड़ा सा बढ़ा,
क्या है अपने देश की पहचान, पढ़।

इनको पढ़कर लोग बनते हैं महान,
वेद, गीता, बाइबिल, क़ुरआन पढ़।

मिल रहा है जो तुझे लोगों से आज,
वो तेरी इज़्ज़त है या अपमान, पढ़।

आ गया दीवान तेरा शहर में,
ऐ 'मयंक' अब 'मीर' का दीवान पढ़।

चलाएंगे अगर सरकार अनपढ़।
करेंगे सब का बन्टाधार अनपढ़।।

जहाँ भी शान्ति पर संवाद होंगे।
चलाएंगे वहीं तलवार अनपढ़।

घड़ी भर में हज़ारों ढूंढ लूंगा,
अगर कहते हो तुम दो-चार अनपढ़।

पढ़े-लिक्खे हो, अपना फ़न दिखाओ,
न रहना बन के बरख़ुरदार अनपढ़।

जिन स्कूलों में शिक्षा भी है धन्धा,
वहीं होने लगे तैयार अनपढ़।

हमें दस रुपये मिलना कठिन है,
बना लेते हैं सौ दीनार अनपढ़।

'मयंक' अब तुम पुराने भूल जाओ,
नए जो हैं, वो हैं हुशियार अनपढ़।

(ण)

नयना, नदिया, शीशा, दर्पण।
सबका अपना अपना दर्पण।।

तुम कितने भी टुकड़े कर दो,
झूठ नहीं बोलेगा दर्पण।

कोई न कोई बसा रहता है,
कब होता है तन्हा दर्पण।

जो सिखलाओ बस वो बोले,
तुम क्या समझे, तोता दर्पण।

आपका सच जाहिर कर देगा,
एक अदद नन्हा सा दर्पण।

जैसे को तैसा बतलाए,
कब देता है धोख़ा दर्पण।

मैं 'मयंक' हूँ, मेरे मन में,
जा बैठा है मेरा दर्पण।

रहे होंगे कभी भगवान कण-कण।
इधर हैं आजकल शैतान कण-गण।।

कभी बाज़ार जा कर देख लेना,
दिखेंगे चीन और जापान कण-कण।

तुझे इन्सान जब कण लग रहे हैं
करें फिर क्यों तेरा गुणगान कण-कण

धरा प्यासी रही, बादल न बरसे,
सदा देते रहे बेजान कण-कण

'मयंक' अब आप इत्मीनान रखिए,
पढ़ेंगे आपका दीवान कण-कण।

(त)

यूँ तो मरी आँसुओं से है शनासाई बहुत।
हाँ मगर आते हैं तो होती है रुसवाई बहुत।।

किससे कीजे, कैसे कीजे इल्मो-फ़न पर गुफ़्तगू,
आजकल अहले-अदब कम हैं, तमाशाई बहुत।

क्या करें उलझन हमारी ख़त्म होती ही नहीं,
उसने सुलझाने को अपनी जुल्फ़ सुलझाई बहुत।

उसका मेरा साथ वैसे तो रहा है कम से कम,
याद आता है मगर फिर भी वो हरजाई बहुत।

सिक्क-ए-जाँ देके भी बू-ए-वफ़ा मिलती नहीं,
आज बाज़ारे-मुहब्बत में है महंगाई बहुत।

हर घड़ी बस एक रट, इस घर का बंटवारा करो,
जाने क्यों नाराज़ है मुझसे मेरा भाई बहुत।

हैं वही लम्हे जुदाई के मगर फिर भी 'मयंक',
जाने क्यों खलने लगी है शामे-तन्हाई बहुत।

उग आएगी काली रात।
सींच रहे हैं माली रात।।

सिर्फ़ औरों को मत कोसो,
तुम ने भी तो पाली रात।

औरों को दिन बख़्श दिए,
मेरे हिस्से ख़ाली रात।

मौसम अपनी ज़िद पर था,
उसने ख़ूब उछाली रात।

दिन था पत्ते-पत्ते पर,
लेकिन डाली-डाली रात।

औरों को दे गई धोखा,
मेरी देखी-भाली रात।

दंग सभी हैं आज 'मयंक',
देखी जो उजियाली रात।

कभी यह शोर था, शैतान दौलत।
मगर अब हो गई ईमान दौलत।।

हिक़ारत से जो इसको देखते थे,
उन्हीं पर कर गई एहसान दौलत।

पढ़ाई से कहाँ मिलता है कुछ भी,
ज़माना जानता है शान, दौलत।

इसी दुनिया में है सारी बुराई,
यहीं अच्छाइयों की खान दौलत।

जो कल तक था यहाँ गुमनाम बन्दा,
उसे भी दे गई पहचान दौलत।

किसी आफ़त, मुसीबत की घड़ी में,
हमें देती है इत्मीनान दौलत।

'मयंक' आँधी के जैसे मसअले हैं,
मिटा देगी इन्हें तूफ़ान दौलत।

कैसे कह दूँ मैं बुज़ुर्गों का है फ़रमाना ग़लत।
जो समझकर भी न समझें उनको समझाना ग़लत।।

उस सितमगर की समझ में यह न आएगा कभी,
जो हैं ठुकराए हुए उनको है ठुकराना ग़लत।

फूल उल्फ़त के अक़ीदत से उठाकर हाथ में,
लेके उनके पास हम पहुँचे हैं नज़राना ग़लत।

देखना जो चाहते हैं हमको रोते ज़ार-ज़ार,
ऐसे लोगों से बहर सूरत है याराना ग़लत।

जाम है हाथों में सबके और मैं हूँ तश्ना लब,
मुझसे साक़ी कह रहा है तेरा पैमाना ग़लत।

आपको शक है तो होगा, ये तो है रिज़्क़े-हलाल,
जो मशक़्क़त से मिला हो कैसे वो दाना ग़लत।

इस क़दर बेगानगी छाई हुई है ऐ 'मयंक',
लगा रहा है मुझको हर इक जाना-पहचाना ग़लत।

देख ले ऐ आसमां मेरी बिसात।
ले गई मुझको कहाँ मेरी बिसात।।

क्या है मक़सद पहले ये ज़ाहिर करो,
पूछना फिर तुम मियां मेरी बिसात।

हो जहाँ दुश्मन मोहब्बत के वहाँ,
मैं ज़ुबां खोलूं, कहाँ मेरी बिसात।

ले के मेरा इम्तहाने-आशिक़ी,
देखिए ऐ महरबां मेरी बिसात।

जानते हैं सब मगर फिर जाने क्यों,
पूछते हैं हमज़बां मेरी बिसात।

जा के मंजिल पर ही दम लूंगा 'मयंक',
मैं जवां हूँ और जवाँ मेरी बिसात।

(थ)

काम न आए निगोड़े रथ।
राजा ने फिर छोड़े रथ।।

सूरज ख़ुद कब चलता है,
खींच रहे हैं घोड़े रथ।

रथ विहीन है अब सेना,
लौटे नहीं भगोड़े रथ।

दुश्मन ने तो त्याग दिया,
लेकिन हमने जोड़े रथ।

एक रथी, इतने सामान,
सारथी, चाबुक, घोड़े, रथ।

गिनती हो तो पदक मिलें,
किसने कितने तोड़े रथ।

हम 'मयंक' एक सैनिक हैं,
युद्ध में कैसे मोड़ें रथ।

पहले समझो तो भुख़मरी का अर्थ।
तब ही समझोगे नौकरी का अर्थ।।

वह मरा भूख़ा, लाखों छोड़ गया,
अब खुला है फटी दरी का अर्थ।

तुमको सरकार क्या बताएगी,
हम से पूछो हरी-भरी का अर्थ।

पहले तुम उसको देखकर आओ,
भूल जाओगे फिर परी का अर्थ।

सोच लो, सोच कर बताओ मुझे,
आजकल क्या है सन्तरी का अर्थ।

सिर्फ़ कहने से कुछ नहीं होता,
जाओ, सीखो, खरी-खरी का अर्थ।

आग आशआर में भरी है 'मयंक',
इसको कहते हैं शायरी का अर्थ।

(द)

अब न कोई ग़म न ग़फ़लत आप से मिलने के बाद।
है मुसर्रत ही मुसर्रत आप से मिलने के बाद।।

लोग कहते हैं कि आप आए क़यामत आ गई,
अब न आएगी क़यामत आप से मिलने के बाद।

इस तरफ़ काबा है मेरे उस तरफ़ है बुतकदा,
मैं करूँ किसकी इबादत आपसे मिलने के बाद।

आपसे जो भी मिला वह अह्ले–इज़्ज़त हो गया,
बढ़ गई मेरी भी शोहरत आप से मिलने के बाद।

पहले मेरी ज़िन्दगी पर छाए थे रस्मो–रिवाज,
भूल बैठा हर रिवायत आप से मिलने के बाद।

बदनसीबी का अंधेरा था 'मयंक' अपना वजूद,
बन गई है मेरी क़िस्मत आप से मिलने के बाद।

तड़प–तड़प के ही गुज़रेगी ज़िंदगी शायद।
मेरे नसीब में लिक्खी नहीं ख़ुशी शायद।।

सुलूक देख के लोगों का ऐसा लगता है,
वफ़ा की रस्म ज़माने से उठ गई शायद।

ज़माना क्या है ये मैंने समझ लिया लेकिन,
समझ न पाया ज़माना मुझे अभी शायद।

किये हैं मैंने जो एहसान भूल जाएंगे,
मेरी वफ़ा का सिला देंगे वह यही शायद।

गुलों के रंगे–तबस्सुम से ऐसा लगता है,
उड़ा रहे हैं मेरे ग़म की ये हंसी शायद।

उदास–उदास जो चेहरे हैं अह्ले–महफ़िल के,
उन्हें भी खलने लगी है मेरी कमी शायद।

गुनह का लेके सहारा 'मयंक' दुनिया में,
ज़मीर बेच के आया है आदमी शायद।

(ध)

यूँ लगा जैसे हो लाचारी विरोध।
क्या यही होता है सरकारी विरोध।।

हाथ जोड़े और नत्मस्तक भी हैं,
कर रहे हैं आज दरबारी विरोध।

मसअला हल हो न पाएगा कभी,
एक मुद्दत से तो है जारी विरोध।

अब समर्थन कोई करता ही नहीं,
बन गया है अब महामारी विरोध।

एक दिन ख़ामोश हो जाएंगे सब,
चार दिन का है ये अख़बारी विरोध।

आम जन बोले, कि यह है इन्क़लाब,
मंत्री बोले है ग़द्दारी विरोध।

इतना सच क्यों बोलते हो तुम 'मयंक'
जल्द ही झेलोगे तुम भारी विरोध।

शान्ति है और हो रहे हैं युद्ध।
रोज़ अश्कों से धो रहे हैं युद्ध।।

अनगिनत युद्ध अपनी दुनिया में,
और महायुद्ध, दो रहे हैं युद्ध।

बस इसी का पता नहीं चलता,
कौन से लोग बो रहे हैं युद्ध।

अब तो बारूद का ज़माना है,
ख़ून से क्यों भिगो रहे हैं युद्ध।

तुम हमें शान्तिदूत मत समझो,
हम निरन्तर संजो रहे हैं युद्ध।

राजनेता भी हो गए घड़ियाल,
शान्ति में भी ये बो रहे हैं युद्ध।

छोड़ दीजे 'मयंक' अब इनको,
कैसे जागेंगे, सो रहे हैं युद्ध।

(न)

रुख़ है महताब सा, चांदनी का बदन।
लोग देखा किए इक परी का बदन।।

बुद्ध, नानक थे जब तक चमकता रहा,
और फिर बुझ गया रोशनी का बदन।

लाज उसकी बचाई कन्हैया ने, फिर,
सात पर्दों में था द्रौपदी का बदन।

आईना देखकर आप शरमा गए,
आप को भा गया आप ही का बदन।

एक दिन तो 'मयंक' आएगी मौत भी,
ख़ाक हो जाएगा हम सभी का बदन।

ऐसा लगता है निकल जाएगी जान।
ज़िन्दगी लेने लगी है इम्तेहान।।

बेटी ब्याहे या चुकाएगा लगान,
बस इसी उलझन में है बूढ़ा किसान।

मेरी हालत भी हुई कुछ इस तरह,
जैसे बारिश में कोई कच्चा मकान।

जंगलों में बांधना बेकार है,
शह्र जाओ, अब वहीं बांधो मचान।

चार पैसे क्या मिले कमज़र्फ़ को,
ख़्वाब में आने लगे रेशम के थान।

मैं ही सच्चा हूँ, मैं रखता हूँ सबूत,
पीठ पर मेरी हैं कोड़ों के निशान।

फ़र्ज़ अदा करती हैं काग़ज़ पर 'मयंक',
मेरी ग़ज़लें भी तो सुनती हैं अज़ान।

(प)

आज ख़ुद को बदल रहे हैं सांप।
आदमी जैसा छल रहे हैं सांप।।

केंचुआ, कनखजूरा या गिरगिट,
किसके सांचे में ढल रहे हैं सांप।

सारे बच्चे तरस रहे हैं मगर,
दूध पी-पी के पल रहे हैं सांप।

ख़ूब पैसे कमाए थे पहले,
अब संपेरों को खल रहे हैं सांप।

साधुओं का चरित्र देख लिया,
मन्दिरों से निकल रहे हैं सांप।

घर से बाहर निकलना मुश्किल है,
रस्ता-रस्ता टहल रहे हैं सांप।

आदमी ज़हर पी रहा है 'मयंक',
क्यों ख़ुशी से उछल रहे हैं सांप।

सर्द मौसम में थी नशीली धूप।
गर्मियों में हुई नुकीली धूप।।

मैं क़फ़स में भी रहता हूँ आज़ाद,
छन के आती है तीली-तीली धूप।

यह करिश्मा तो बारिशों का है,
वरना होती कहाँ है गीली धूप।

कोई जादू है या अजूबा है,
उजले सूरज की पीली-पीली धूप।

छा गया है फ़लक पे इन्द्रधनुष,
सात रंगों में है रंगीली धूप।

उस शजर का ही क़द बलन्द हुआ,
जिसने पानी के संग पी ली धूप।

अब तो सूरज भी ढल चुका है 'मयंक',
जितना जीना था उतना जी ली धूप।

(फ़)

देख लेंगे आप अगर मेरी तरफ़।
होगी फिर सबकी नज़र मेरी तरफ़।।

अंजुमन में अपने क्या कह दिया,
देखता है हर बशर मेरी तरफ़।

अज़मतें क्यों कर न चूमेंगी क़दम,
हैं सभी अह्‌ले-हुनर मेरी तरफ़।

उसकी जानिब देखती हैं मंज़िलें,
और यह गर्दे-सफ़र मेरी तरफ़।

हैं मुख़ातिब दूसरों से बज़्म में,
देखते हैं वह मगर मेरी तरफ़।

मैंने भी सींचा है ख़ूँ से गुलसितां,
फेंकिए कुछ तो समर मेरी तरफ़।

क्यों करुँ मैं फ़िक्रे-मुस्तक़बिल 'मयंक',
आप आ जाएं अगर मेरी तरफ़।

है रक़ीबों का जहाँ मेरे ख़िलाफ़।
तुम न होना मेहरबां मेरे ख़िलाफ़।।

रच रहे हैं साज़िशों पर साज़िशें,
ये ज़मीनो-आसमां मेरे ख़िलाफ़।

जिनके मुँह में डाल दी मैंने ज़ुबां,
वो ही खोलेंगे ज़ुबां मेरे ख़िलाफ़।

अलमदद ऐ मालिके-कौनो-मकां,
हो गया है इक जहाँ मेरे ख़िलाफ़।

रोज़े-महशर सच बताएं ऐ 'मयंक',
आप देंगे क्या बयां मेरे ख़िलाफ़।

(ब)

आप कहते हैं कि काग़ज़ की किताब।
अस्ल में है ज्ञान की कुन्जी किताब।।

पढ़ने वालों को सिखाती है हुनर,
जाहिलों के वास्ते रद्दी किताब।

अच्छी शय है, दीजिए उपहार में,
फूल से बच्चों को ख़ुश्बू सी किताब।

उग गया सूरज तो थक कर सो गई,
पढ़ रही थी रात भर बेटी किताब।

ख़ुद नहीं आएगी चलकर आप तक,
बेहया दुनिया में शर्मीली किताब।

है अंधेरे की तरह अज्ञानता,
आसमां पर सुबह की लाली किताब।

ऐ 'मयंक' आफ़त से मैं महफ़ूज़ हूँ
ख़ुद मिरी करती है रखवाली किताब

बाढ़ में देहात का मन्जर अजीब।
रात भर लगते हैं सारे घर अजीब।।

आइए फुटपाथ देखें शहर के,
नींद के मारों का है बिस्तर अजीब।

थालियाँ देते हैं अब पहचान कर,
धर्म वालों का भी है लंगर अजीब।

आज के इन्सान को मैं क्या कहूँ,
घर के अन्दर ठीक हैं, बाहर अजीब।

आप इस पर ग़ौर तो फ़रमाइए,
आदमी लगता है क्यों अकसर अजीब।

उस घड़ी सबको ख़ुदा की आई याद,
जब हवा के हो गए तेवर अजीब।

आइनों से ख़ौफ खाते हैं 'मयंक',
हो गए हैं इन दिनों पत्थर अजीब।

कठिन मौसम में चेहरे खो गए सब।
ख़ुशी आई तो शामिल हो गए सब।।

अभी कल शब थे मयख़ाने में बैठे,
सुना है आज काबा को गए सब।

कोई तन्हा सफ़र में कैसे जाता,
सभी को ख़ौफ़ था, दो-दो गए सब।

गुलामों पर बहुत पाबन्दियाँ थीं,
मगर दुखड़ा तो अपना रो गए सब।

मुख़ालिफ़ सब के सब थे सलतनत के,
हुई जब ताजपोशी, तो गए तब।

अचानक क्या हुआ, सब लौट आए,
नजूमी कह रहा था, लो गए सब।

'मयंक' अब इनको क़िस्सा मत सुनाओ,
कहाँ जागा है कोई, सो गए सब।

(भ)

तुम कहते हो, दौलत दुर्लभ।
मैं कहता हूँ, इज़्ज़त दुर्लभ।।

आज शरीफ़ों की दुनिया में,
नेकी और मुहब्बत दुर्लभ।

झूठ खड़ा है सीना ताने,
सच्चाई की ताक़त दुर्लभ।

फ़ुटपाथों से देश को देखो,
इतने सारे सर, छत दुर्लभ।

लीपा-पोती ही होती है,
मज़दूरों की मेहनत, दुर्लभ।

इन्सानों की बात न पूछो,
सीरत दुर्लभ, सूरत दुर्लभ।

अब 'मयंक' मत ढूंढो इसको,
सच्चाई शत-प्रतिशत दुर्लभ।

दुखी बोला प्रभु का जाप ही शुभ।
पुजारी ने कहा सन्ताप ही शुभ।।

'अतिथि देवो भव:' है अपने मन में,
हमारे वास्ते हैं आप ही शुभ।

इकट्ठा हो गए सब चौधरी फिर,
कहा पंचायतों में खाप ही शुभ।

इधर गर्मी से जनता मर रही है,
मगर सरकार बोली, ताप ही शुभ।

न आओ द्वार ही से लौट जाओ,
तुम्हारे पांव की इक चाप ही शुभ।

चढ़ाओ देवता को फूल, फल, दूध,
न दें वरदान, उनका शाप ही शुभ।

अशुभ कहने लगे हैं पुण्य को सब,
'मयंक' इस युग में होगा पाप ही शुभ।

(म)

राह के पत्थर को ठोकर से हटा देते हैं हम।
जब कोई हद से गुज़रता है सज़ा देते हैं हम।।

तंग आकर मौत को भी ख़ुदकुशी करनी पड़े,
आजकल हालात ही ऐसे बना देते हैं हम।

ऐ बुते-काफ़िर इसी में है अगर तेरी ख़ुशी,
ले तेरे क़दमों पे सर अपना झुका देते हैं हम।

आँख में आँसू हैं फिर भी ऐ अनीसे-ज़िंदगी,
दिल तेरा रखने की ख़ातिर मुस्करा देते हैं हम।

शम्अ रोती है जलाकर जिनको अपनी बज़्म में,
उन पतंगों को कहां दादे-वफ़ा देते हैं हम।

शायरी क्या चीज़ है जो यह समझते ही नहीं,
ऐसे ना-अह्लों को महफ़िल से उठा देते हैं हम।

देखते हैं रश्क से हमको फ़रिश्ते भी 'मयंक',
जब ख़ुलूसे-दिल से दुश्मन को दुआ देते हैं हम।

शम्अ को जांबाज़ रक्खा अपने परवाने का नाम।
आप भी रख दीजिए कुछ अपने दीवाने का नाम।।

बस अभी आए, अभी लेने लगे जाने का नाम,
तुमको जाना था तो क्यों तुमने लिया आने का नाम।

इन ग़ुलामों को भी अपनी ग़ैरतों का पास है,
क्यों किसी के सामने लें हाथ फैलाने का नाम।

बाद मरने के रसाई है जमाले-यार तक,
ज़िंदगी है इश्क़ में हद से गुज़र जाने का नाम।

रहती दुनिया तक ज़माना जिसको दुहराता रहे,
इस क़दर दिलचस्प रख दो मेरे अफ़साने का नाम।

मस्त आँखों से वो अपनी जाम छलकाते रहे,
किस तरह लेता कोई फिर होश में आने का नाम।

पी के नज़रों से अगर सरशार हो जाते 'मयंक',
फिर न लेते हम कभी भूले से पयमाने का नाम।

मुहब्बत को शरीके-ग़म बनाकर क्या करंगे हम।
तुम्हारी याद में आँसू बहाकर क्या करंगे हम।।

जिधर देखो उदासी, आह, आँसू, बेबसी, शिक्वे,
जहाँ सब रो रहे हों, मुस्कुरा कर क्या करेंगे हम।

जिन्हें फ़ुर्सत नहीं है रात-दिन आँसू बहाने से,
अब उनको दास्ताने-ग़म सुना कर क्या करंगे हम।

सियासत का ये नंगा नाच गर होता रहा यूँ ही,
इलेक्शन जीत कर, संसद में जाकर, क्या करेंगे हम।

जो लेकर आड़ मज़हब की, फ़ज़ा में भरते हैं दहशत,
उन्हें बानी कबीरा की सुना कर क्या करेंगे हम।

'मयंक' उल्फ़त का, नफ़रत का, असर अब कुछ नहीं होता,
किसी के पास आकर, दूर जा कर, क्या करंगे हम।

(य)

पैसे बिन अब किस जगह मिलता है न्याय।
भूलकर मत सोचिए सस्ता है न्याय।।

आँख होती ही नहीं क़ानून की,
इसलिए कहते हैं सब अन्धा है न्याय।

सच अदालत में था भौंचक्का खड़ा,
झूठ ने हंसकर कहा, अच्छा है न्याय।

पूछिए क़ानून के विद्वान से,
क्या किसी मुफ़लिस को मिल सकता है न्याय।

जो धनी हैं, खेलते हैं न्याय से,
मुफ़लिसों से तो बहुत खेला है न्याय।

आम जनता को भी कुछ बतलाइए,
कौन शय कानून है और क्या है न्याय।

तुम तो बाशिन्दे यहाँ के हो 'मयंक',
क्या तुम्हें इस शहर में दिखता है न्याय।

मश्वरा मेरा और मेरी राय।
किसको दरकार है ज़मीनी राय।।

एक ज़ीरो बढ़ाइए तो सही,
सौ रुपए में नहीं मिलेगी राय।

सज्दा करना मुझे नहीं आता,
मैं नहीं मानता तुम्हारी राय।

मसअले का सुलझना मुश्किल है,
सबके अपने मिज़ाज़, अपनी राय।

आप तो ख़ुद फ़रीक़ हैं इसमें,
आप ने किस तरह से दे दी राय।

भीगी आँखों में इक गुज़ारिश थी,
लौट आना, यही थी उनकी राय।

जो कभी बोलते नहीं हैं 'मयंक',
देखिए दे रहे हैं कैसी राय।

(र)

अश्क आँखों से ढलते रहे रात भर।
ग़म के पर्वत पिघलते रहे रात भर।।

करके वादा कोई सो गया चैन से,
करवटें हम बदलते रहे रात भर।

रोशनी दे न पाए हमें ये चराग़,
यूँ तो कहने को जलते रहे रात भर।

हमको पीने को इक भी न क़तरा मिला,
दौर पर दौर चलते रहे रात भर।

आबरू क्या बचाएंगे गुलशन की वह,
ख़ुद जो कलियां मसलते रहे रात भर।

हसरतें दिल में घुट-घुट के मरती रहीं,
और जनाज़े निकलते रहे रात भर।

हिज्र में नींद उनको भी आई नहीं,
छत पे हम भी टहलते रहे रात भर।

जाने क्यों तीरगी के 'मयंक' अज़दहे,
रोशनी को निगलते रहे रात भर।

जब ख़ूं में रह सके न रवानी तमाम उम्र।
फिर कैसे रह सकेगी जवानी तमाम उम्र।।

दिल का हर एक राज़ निगाहों ने कह दिया,
कैसे छुपेगी दिल की कहानी तमाम उम्र।

सुनकर मिरी ग़ज़ल को जला है मिरा रक़ीब,
मैंने तो की है शोला बयानी तमाम उम्र।

मुफ़लिस दहेज का जो न कर पाया इन्तिज़ाम,
डोली चढ़ी न बेटी सयानी तमाम उम्र।

बन के तुम्हारी याद महकती रही सदा,
जूही, चमेली, रात की रानी तमाम उम्र।

जिसके लिये ये जान और ईमान दे दिये,
उसने ही मिरी क़द्र न जानी तमाम उम्र।

मैंने 'मयंक' जिसकी हर इक बात मान ली,
उसने ही मिरी बात न मानी तमाम उम्र।

(ल)

तर्जुमाने - ज़िंदगानी है ग़ज़ल।
आपकी मेरी कहानी है ग़ज़ल।।

जिसकी ख़ुश्बू से महकता है अदब,
वह महकती रात-रानी है ग़ज़ल।

ग़म की चादर ओढ़कर बैठे हैं जो,
उनको ख़ुशियों की सुनानी है ग़ज़ल।

जो न रख पाएं ग़ज़ल की आबरू,
ऐसे लोगों से बचानी है ग़ज़ल।

शायरी तो शह्र जैसी है मगर,
फ़िक्रो-फ़न की राजधानी है ग़ज़ल।

'मीर','मोमिन','ग़ालिब'-ओ-'फ़ैज'-ओ'फ़िराक़',
इनके फ़न से जावेदानी है ग़ज़ल।

जो 'मयंक' अब साहबे-दीवान है,
उसकी शोहरत की निशानी है ग़ज़ल।

धूप भी हो जाती है शीतल।
सर पे अगर है माँ का आँचल।।

ढूँढ रहा है किसको पागल,
सहरा-सहरा जंगल-जंगल।

दर्द नहीं था दिल में वरना,
आँसू हो जाते गंगाजल।

बच के रहना, अब आँखों से,
लोग चुरा लेते हैं काजल।

खेतों से कतरा जाते हैं,
रोज़ समन्दर पर हैं बादल।

ख़तरे तो देहातों में है,
शह्र में क्यों है इतनी हलचल।

हम 'मयंक' गांधीवादी हैं,
खादी भी लगती है मलमल।।

(व)

इधर, इस तरफ, त्रासदी का बहाव।
वो आएं, तो हो ज़िन्दगी का बहाव।।

अंधेरे-उजाले में ढूंढा उसे,
न जाने किधर है खुशी का बहाव।

किसी दोस्त की बांह पकड़ो, अभी,
बहुत तेज़ है दुश्मनी का बहाव।

मेरा चाँद तो कब का रुख़्सत हुआ,
रहा देर तक चाँदनी का बहाव।

अब ऐसा न हो यह भी हम तोड़ दें,
जो दरिया में है दो घड़ी का बहाव।

ये सैलाब है, डूब जाओगे तुम,
कहाँ आदमी और नदी का बहाव।

ज़माने में सबको बहा ले गया,
'मयंक' आपकी शायरी का बहाव।

सर्द मौसम और ये छिटपुट अलाव।
जैसे दरिया में बिना पतवार नाव।।

लोग हमको देखकर बेचैन हैं,
इस ग़रीबी में भी इतना रख-रखाव।

इल्म की बातें यहाँ मत कीजिए,
पूछिए दौलत से किसको है लगाव।

साफ़-सुथरा जिस्म तो बेदाग़ है,
रूह पर मेरी मगर हैं ढेरों घाव।

दूसरों पर ध्यान रखते हैं सभी,
देखता है कौन, कब अपना स्वभाव।

नेकियाँ हल्की थीं, कब की उड़ गईं,
हम पे रहता है गुनाहों का दबाव।

तुम ग़रीबी पर लिखोगे क्या 'मयंक',
तुमने कब झेला है पैसों का अभाव।

(श)

ज़ख़्मे-दिल को क्यों न हो आख़िर नमकदां की तलाश।
दर्द के पहलू किया करते हैं दरमां की तलाश।।

नाख़ुदा तुझको मुबारक हो ये माहौले-सुकूत,
मेरी किश्ती को रहा करती है तूफ़ां की तलाश।

फिर बहारों ने परिस्तारे-जुनूं से छेड़ की,
दश्ते-वहशत को है फिर मेरे गरेबां की तलाश।

या ख़ुदा फिर कोई पैदा हो सदाक़त का अमीन,
एक मुद्दत से निगाहों को है इंसां की तलाश।।

मेरी नज़रें ढूंढती हैं इक हसीं चेहरा मगर,
दिल के हर गोशे को है शम्ए फ़रोज़ां की तलाश।

रख सके महफ़ूज जो सहने चमन की आबरू,
गुंचा-ओ-गुल को है ऐसे इक निगहबां की तलाश।

ज़ख़्मे-दिल, ज़ख़्मे-जिगर से क्या ग़रज़ उनको 'मयंक',
उनके हर तीरे-नज़र को है रगे-जां की तलाश।

न होती अगर आपकी यह नवाज़िश।
तो ख़ुशियों की होती कहाँ हम पे बारिश।।

जो हंस-हंस के सहते हैं ज़ुल्मो-सितम को,
वो अश्कों की करते नहीं हैं नुमाइश।

ये मिट्टी के घर टूट जाएंगे इक दिन,
चलो हम बनाएं दिलों में रिहाइश।

अगर पार करनी हैं दुश्वार राहें,
तो पाँवों में आने न दो अपनी लग़ज़िश।

बिकाऊ हो मुंसिफ़ तो इंसाफ़ मुश्किल,
करें आप कितने भी दावा-ओ-नालिश।।

ज़रा मुस्कुरा कर इधर देख लीजे,
यही इल्तिजा है, यही है गुज़ारिश।

'मयंक' इतना तो मेरे दिल को यक़ीं है,
कि पूरी करेगा कोई मेरी ख़्वाहिश।

(ष)

आप भी देखिए न अपना दोष।
फिर बताएं हमें, हमारा दोष।।

मैंने पूछा, तुम्हारी ये हालत,
उसने बतलाया देवता का दोष।

दोष मुफ़लिस का काले धब्बे सा,
और अमीरों का जगमगाता दोष।

अब अदालत पे मुझको हैरत है,
मुजरिमों का कोई नहीं था दोष।

यह सियासत कमाल करती है,
ले के आई रचा-रचाया दोष।

तुमने दौलत कमाई, ठीक किया,
साथ इसके मगर कमाया दोष।

चाँद की बात कर रहे हो 'मयंक',
तुम को किस तरह उसका भाया दोष।

देखा भोला-भाला हर्ष।
खोल गया हर ताला हर्ष।।

सब रंगों में मिलता है,
नीला, पीला, काला हर्ष।

विद्वानों की महिमा थी,
अच्छा शब्द निकाला हर्ष।

बस थोड़ा सा धैर्य रखें,
देगा और उजाला हर्ष।

दुख कितने भी वार करें
अपना है रखवाला हर्ष

राजनीति ने फेंक दिया,
त्योहारों ने पाला हर्ष।

अब 'मयंक' यह पक्का है,
तुमने खूब उबाला हर्ष।

(स)

कौन झुकाता है चौखट पर उसकी सर बेलौस।
मैं करता हूँ उसको सज्दा फिर भी मगर बेलौस।।

लाख ज़माना पत्थर मारे, तोड़े इनके फूल,
पेड़ मगर देते हैं फिर भी मीठे समर बेलौस।

तेरे मन की सभी मुरादें पूरी करेगा वो,
उसकी जानिब अगर उठेगी तेरी नज़र बेलौस।

बाँट के अमृत सारे जग को, सुन लो ऐ लोगो,
ज़हर का प्याला हंस कर पी गए, शिव शंकर बेलौस।

उनको कौन सज़ा दी जाए, बतलाओ तो 'मयंक',
राह दिखाते नहीं किसी को जो रहबर बेलौस।

कहीं गीता के वारिस हैं, कहीं क़ुरआन के वारिस।
हक़ीक़त में मगर यह सब हैं हिन्दुस्तान के वारिस।।

हमारी पारसाई पर ख़ुदाई नाज़ करती है,
हमीं हैं बस हमीं हैं, दौलते-ईमान के वारिस।

अदब और शायरी का दोस्तो हाफ़िज़ ख़ुदा होगा,
अगर जाहिल रहेंगे 'मीर' के दीवान के वारिस।

मुझे हर एक मज़हब से ज़ियादा देश प्यारा है,
मेरी यह बात सुन लें धर्म के ईमान के वारिस।

वो जिसके नाम से लाखों हज़ारों फ़ैज पाते थे,
बिलखते भूख़ से देखें हैं उस सुलतान के वारिस।

'मयंक' अठखेलियाँ करते हैं जो मौजे-हवादिस से,
हक़ीक़त में वही तो होते हैं तूफ़ान के वारिस।

शहज़ादा, राजा, रूप की रानी के आसपास।
हम आज भी हैं क़िस्से–कहानी के आसपास।।

बच्चों के हर सवालों से अंदाज़ा होता है,
बचपन पहुंच रहा है जवानी के आसपास।

आए हैं इस तरफ़ तो कोई बात है ज़रूर,
सरकार आप! खेती–किसानी के आसपास।

सैलाब एक क़हर जैसा आया और हम,
अपनों को ढूंढते रहे, पानी के आसपास।

टी.वी. बिगड़ गया तो ये बच्चों को क्या हुआ,
दादी के आसपास हैं, नानी के आसपास।

उसने मुआफ़ी मांग तो ली थी मगर 'मयंक',
लहजा था उसका शोला बयानी के आस–पास।

किसको कहते हैं सब नया एहसास।
आपको देखकर हुआ एहसास।।

उसका होना था, ज़िन्दगी मेरी,
याद उसकी है दूर का एहसास।

किसकी जानिब तुम्हारी नज़रें हैं,
सारे लोगों को हो गया एहसास।

आपका दुख से कौन सा नाता,
आपका कब का मर चुका एहसास।

मर ही जाता मैं हादसे में मगर,
चन्द लोगों के पास था एहसास।

मैंने एहसास पर सवाल किया,
उसने पूछा कि कौन सा एहसास।

आदमीयत अभी है ज़िन्दा 'मयंक',
हो रहा है ज़रा–ज़रा एहसास।

चन्द लोगों की ज़िन्दगी मख़्सूस।
दुश्मनी और दोस्ती मख़्सूस।।

दूसरों को तो गंगा भेज दिया,
ख़ुद वो चुनते रहे नदी मख़्सूस।

हम तो आम आदमी हैं हमको क्या,
हम भी कहते देंगे, आप ही मख़्सूस।

हारना ही मेरा मुक़द्दर था,
आपने चाल ही चली मख़्सूस।

आम इन्सान सज्दा करता है,
ख़ास लोगों की बन्दगी मख़्सूस।

हम को जो मिल गया, वही खाया,
आपका दूध, घी, दही मख़्सूस।

दर्द अशआर में था मेरे 'मयंक',
लोग हंसते रहे हंसी मख़्सूस।

(ह)

ख़ुश अदा की तरह ख़ुश बयां की तरह।
बात कीजे तो हिन्दी ज़ुबां की तरह।।

फ़र्श से उठके जो अर्श पर आ गए,
ज़ुल्म ढाने लगे आसमां की तरह।

आप बीती सुनाता रहा मैं उन्हें,
वह भी सुनते रहे दास्तां की तरह।

कर रहा था सफ़र मैं तो तन्हा मगर,
फिर भी लूटा गया कारवाँ की तरह।

बस उसी शाख़ पर बर्क़े-सोज़ां गिरी,
जिस पे डाली गई आशियाँ की तरह।

देखकर मुझको नज़रें झुकाना नहीं,
राज़ रखना तो इक राज़दां की तरह।

मुझको राहें दिखाते रहेंगे 'मयंक',
उनके नक्शे क़दम कहकशां की तरह।

दूर क्यों बैठे हो तन्हा बेसहारों की तरह।
एक बरसाती नदी के दो किनारों की तरह।।

आते-जाते मौसमों की ही तरह है ज़िन्दगी,
लौट कर फिर आएगी जाती बहारों की तरह।

मैं फ़रिश्ता हूँ, न कोई देवता, इन्सान हूँ,
किसलिए मुझको परखते हैं सुनारों की तरह।

उस अंधेरी रात में तारे भी ग़ायब,चांद भी,
एक जुगनू रात भर चमका सितारों की तरह।

पाक होता है पसीना भी अगर मेहनत का हो,
आबे-ज़म-ज़म की तरह, गंगा के धारों की तरह।

शह्र में लोगों से मिलना भी मुसीबत है 'मयंक',
अब पढ़े-लिक्खे भी मिलते हैं गंवारों की तरह।

कश्ती में तो घबराया सा था धार से मल्लाह।
ले आया किनारे पे भी पतवार से मल्लाह।।

मैं पाँव धुलाऊँगा तभी पार करूँगा,
सौ बार ये कहता रहा अवतार से मल्लाह।

ये क्या हैं, नदी और समन्दर को पता है,
तुमको जो नज़र आते हैं बेकार से मल्लाह।

आँधी हो कि तूफ़ान ये पा जाते हैं मन्ज़िल,
डरते ही नहीं इनकी भी रफ़्तार से मल्लाह।

तुमको ही 'मयंक' आज यहाँ जीत मिलेगी,
इन्सान हो तुम जिस्म से, किरदार से मल्लाह।

तलवारें हर तरफ़ हैं तो चाकू जगह-जगह।
बस्ती में हमने देखे है आँसू जगह-जगह।।

दीवारें जिनकी ज़ुल्म की पहचान थीं कभी,
अब उन हवेलियों में हैं उल्लू जगह-जगह।

रोटी के लाले पड़ गए, हर ऐश छिन गया,
पहले जहाँ पे बजते थे घुंघरू जगह-जगह।

ईमान उनके तोलो तो कम ही निकलते हैं,
लटके हैं जिनके घर पे तराज़ू जगह-जगह।

मेहनतकशों के हाथों की क़ीमत नहीं रही,
बिकते हैं सिर्फ़ ज़ुल्म के बाज़ू जगह-जगह।

सारे गुनाहगार समझते हैं, बच गए,
तेरी नज़र से कौन बचा, तू जगह-जगह।

मौसम, पहाड़, धूप, नदी, पेड़ों पर 'मयंक',
यह कौन फूँक देता है जादू जगह-जगह।

(क्ष)

एक ही था, जमा-जमाया दक्ष।
खुद को एकलव्य ने बनाया दक्ष।।

फ़ौज गोरों की और अकेला सुभाष,
बोलिए किसके हाथ आया दक्ष।

वो भगत सिंह अब भी ज़िन्दा है,
देश भक्तों को खूब भाया दक्ष।

नक़ली गाँधी अनेक मिलते हैं,
है समाधिस्थ गोली खाया दक्ष।

अबके नेता को ग़ौर से देखें,
ऐसा होता है ख़ौफ़ खाया दक्ष।

लूट का भेद खुल रहा था जब,
उस घड़ी कितना तिलमिलाया दक्ष।

आपके सामने 'मयंक' आया,
देख लीजे सजा-सजाया दक्ष।

पहले बता रहे थे, हवा भर है अन्तरिक्ष।
अब लोग कह रहे हैं समन्दर है अन्तरिक्ष।।

धरती पे हम हैं जैसे भंवर में फंसे हुए,
पाताल अपने नीचे है, ऊपर है अन्तरिक्ष।

तस्वीरें सबने देखी हैं अपनी निगाह से,
अब भी नज़र से दूर का मन्ज़र है अन्तरिक्ष।

बाक़ी ये सोचते हैं, कहें क्या, बताएँ क्या,
कुछ देश कह रहे हैं कि इक घर है अन्तरिक्ष।

अस्तित्व पर सवाल उठाने लगे हैं लोग,
कुछ लोग कह रहे हैं नहीं, पर है अन्तरिक्ष।

इसके लिए 'मयंक' मरे जा रहे हैं सब,
हालांकि इस ज़मीन से बदतर है अन्तरिक्ष।

(त्र)

आदमी पर लदे हैं भार विचित्र।
आ गए हैं कई विचार विचित्र।।

अपनी औक़ात भूल बैठे हैं,
हर किसी को चढ़ा बुख़ार विचित्र।

मौत का दिन तो सीधा सादा है,
ज़िन्दगी वाले दिन हैं चार विचित्र।

शक्ल भी इनकी आदमी जैसी,
अब दरिन्दों के हैं कछार विचित्र।

देखकर आँखें फेर लेते हैं,
वो समझते हैं मेरा प्यार विचित्र।

जब से तुमको मिले हैं कुछ पैसे,
तुमको लगते हैं रिश्तेदार विचित्र।

पहले जैसा भी अब नहीं है 'मयंक'
हो रहा है मगर सुधार विचित्र।

सबूत है विचित्र से, अजब दलील का चरित्र।
बुलन्द अब भी है मगर यहाँ वकील का चरित्र।।

तमाम ज़िन्दगी नज़र खुद उनकी गिद्ध जैसी थी,
वो आज हमसे पूछने लगे हैं चील का चरित्र।

तपिश में खुश्क हो गई तो सर्दियों में जम गई,
मुझे कोई बताएगा, ये क्या है झील का चरित्र।

ये ठीक है कि फ़ायदे भी इसके बेशुमार हैं,
चुभेगी सबके पाँव में, यही है कील का चरित्र।

न पर्वतों में पाओगे, न जंगलों में पाओगे,
यहाँ पे अब न भील है, न अब है भील का चरित्र।

हुज़ूर इसके बारे में, ज़माने भर से पूछिए,
मैं क्या बताऊँ आपको किसी ज़लील का चरित्र।

'मयंक' शान्ति ढूंढता है मन मेरा यहाँ-वहाँ,
मैं जानता हूँ, मुझ में भी है पँचशील का चरित्र।

(ज्ञ)

बोले पण्डित, कीजिए यजमान यज्ञ।
और फिर करने लगा इन्सान यज्ञ।।

यज्ञ धनवानों का मेले की तरह,
हम ग़रीबों का मगर बेजान यज्ञ।

कुल पुरोहित ने विचारा है सगुन,
फिर वो बोले, सौ गुणों की खान यज्ञ।

आग, दंगा, लूट, हत्या, अपहरण,
कर रहा है इन दिनों शैतान यज्ञ।

अर्चना-पूजा से क्या मिल पाएगा,
आप पहले कीजिए श्रीमान यज्ञ।

यज्ञ का गुणगान करते जाइए,
फिर करेंगे आपका गुणगान यज्ञ।

शायरी पहचान है तेरी 'मयंक',
दूसरे लोगों की है पहचान यज्ञ।

अब है सिर्फ़ मुखौटा विज्ञ।
आज कहाँ है ज़िन्दा विज्ञ।।

सबको देता है उपदेश,
ख़ुद है बिखरा-बिखरा विज्ञ।

देखो, पत्थर जैसा है,
पहले था आईना विज्ञ।

देव, मसीहा या इन्सान,
यह मत पूछो क्या है विज्ञ।

जाहिल मालामाल हुए,
और इधर, घसियारा विज्ञ।

शीशा देख के लौटे हो,
तुमने किस दिन देखा विज्ञ।

यह 'मयंक' ही बतलाएं,
कैसा होगा सच्चा विज्ञ।

मेरे पसंदीदा अशआर

या ख़ुदा फिर कोई पैदा हो सदाक़त का अमीन
एक मुद्दत से निगाहों को है इन्साँ की तलाश

हो जहाँ शिव की अज़ानें और ख़ुदा की आरती
वो इबादतगाह हिन्दुस्तान होना चाहिए

ज़रूरी तो नहीं हम साहिबे-ईमान हो जाएं
मगर इतना ज़रूरी है कि हम इंसान हो जाएं

हम हुसैनी बिरहमन हैं हमको इसका ज्ञान है
हक़ की ख़ातिर जान देने में वफ़ा की शान है

ये दुआए-हज़रते-शब्बीर का एहसान है
अह्ले-कूफ़ा मिट गए, हिन्दी हैं हिन्दोस्तान है

या अली कहकर उड़ा देना चिता की राख को
कर्बला तक यह पहुँच जाए मिरा अरमान है

वे वतन पर मिट गए और ये मिटा देंगे वतन
जानते हो किस तरफ़ मेरा इशारा है मियाँ

जो कश्ती तेरी रहमत के सहारे छोड़ देता है
उसे तूफ़ान ख़ुद लाकर किनारे छोड़ देता है

दुनिया की इक फ़कीर ने कुछ यूँ मिसाल दी
मुट्ठी में भर के धूल हवा में उछाल दी

ख़ुदा का शुक्र है हम हिन्दुओं में
कोई शब्बीर का क़ातिल नहीं है